चन्दामामा
जनवरी १९६९
75

चन्दामामा

जानवरी १९६९

Parry's

खुशी खबर...
आपके मनपसंद
साठे
पिकनिक
बिस्कुट
अब खूबसूरत और
हवासे बचाव करने वाले
कारटन में मिलते हैं।
साठे बिस्कुट एण्ड चॉकलेट कं. लि., पूना-२

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
'चन्दामामा' की कहानियों की प्रशंसा में जो पत्र आते हैं, उनसे हमें बड़ा संतोष होता है! आप लोगों के सुझाव के अनुसार इस बार हमने कई छोटी कहानियाँ दीं, जो आपका मनोरंजन के साथ ज्ञानवर्द्धन भी करेंगी।
चन्दामामा की लोकप्रियता का प्रमाण यही है कि इसे बच्चों से लेकर युवक-युवतियाँ व वृद्ध भी बड़े चाव से पढ़ते हैं। हम भविष्य में आपके सुझावों के अनुसार हास्यरस की कहानियाँ प्रकाशित करने जा रहे हैं।
वर्ष : २० जनवरी १९६९ अंक : ५
CHITRA

भारत का इतिहास

भारत में ज्यों ज्यों ब्रिटीशवालों का अधिकार फैलता गया, त्यों-त्यों उनके शासन-विधान में तथा भारतीय जनता के जीवन-विधान में भी ऐसे परिवर्तन होने लगे, जिनकी कल्पना तक न की गयी थी। अनादिकाल से जो शांतिपूर्ण जीवन-व्यवस्था थी, उसमें हलचल पैदा हो गयी। अनेक प्रदेशों में जनता ने विद्रोह किया। बरेली (१८१६), छोटा नागपुर, पलाम (१८३१-३२), बरासत (१८३१), फलिदपुर (१८४७) में तथा अन्य प्रांतों में भी छोटे-बड़े विद्रोह हुए। विद्रोहियों में हिन्दू और मुसलमान भी थे। १८४९-१८५५ के बीच मोप्लाओं ने चार बार विद्रोह किया। १८५७-५९ के बीच संतालों का विप्लव चला। १८५७-५९ के बीच जो महान विप्लव हुआ, वह इन सबसे भयंकर था। इस विप्लव के द्वारा भारत में ब्रिटीश साम्राज्य की जड़ें एक साथ हिल उठीं।

इस महा विप्लव के पीछे आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक, व सैनिक कारण भी थे। बहुत समय से मुग़ल साम्राज्य की जो कांति प्रकाशमान थी और जो क्षीण होने की थी, उसका निर्मूल करने का ब्रिटीशवालों ने संकल्प किया। इससे मुसलमान दुखी हुए। बाजीराव द्वितीय, नाना साहब इत्यादि लोगों के पेन्शन बंद करने से हिन्दू लोग भी हताश हुए। बहुत समय से अनेक राज्यों के शासक भी ब्रिटीशवालों के शासन का अंत करने को सोच रहे थे। उनमें अहमदुल्ला (अवध के माजी शासक का सलाहकार), नाना साहब, नाना के रिश्तेदार राव साहब, तांतिया तोपे, अजीमुल्लाह खाँ, झांसी की रानी,

कुँवरसिंह, फिरोजशाह (मुग़ल बादशाह बहादुरशाह का रिश्तेदार) मुख्य हैं ।

ब्रिटीश सरकार ने अनेक ज़मीन्दारों की ज़मीन्दारियाँ हस्तगत कर लीं और उन पर आधारित लोगों की आजीविका छीन ली । राजाओं के अधिकारों को हड़प लिया । फलतः देश के कई प्रांतों में आर्थिक विषमता फैल गयी । पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव देश में बढ़ता जा रहा था, यह सनातन धर्मावलिंबियों के लिए असनीय बना । सती-प्रथा, भ्रूण-हत्या का निषेध करना उनके दुख का कारण बना । १८५६ में नारी का पुनर्विवाह क़ानून की दृष्टि से मान्य घोषित हुआ । ईसाई मशनरियाँ भारतीयों को अपने धर्म में अधिक संख्या में शामिल करने लगीं ।

इस प्रकार की कई ऐसी बातें थीं जो जनता में असंतोष पैदा करती थीं, फिर भी सिपाहियों में असंतोष न पैदा होता, तो १८५७ का विप्लव न होता । सिपाहियों में भी ब्रिटीश अधिकारियों के प्रति असंतोष पैदा होता आ रहा था । वे सिपाहियों को सुदूर प्रदेशों में लड़ने के लिए ले जाते और दीर्घकाल तक उनसे लड़वा देते । इस काम के लिए अतिरिक्त

भत्ते माँगने पर भी न देते थे। इस कारण से सिपाहियों ने १८४४-१८५७ के बीच चार बार विद्रोह किया ।

इस हालत में रायफिल की कारतूसों ने आग में घी का काम किया । उसी वक़्त एनफील्ड रायफिल का सेना में प्रवेश किया गया था । उसकी कारतूसों में जानवरों की चर्बी का लेप किया गया था । सिपाहियों को मालूम हुआ कि वह चर्बी गायों और सुअरों की है । हिन्दू और मुसलमान भी इसे सहन न कर सके । नाना साहब, झांसी की रानी ने उत्तेजित सिपाहियों को और भड़का दिया ।

१८५७ के विद्रोह के प्रारंभिक चिह्न पहले पहल बैरकपूर और बरहामपूर (बेंगल) में दिखायी दिये। लेकिन उन प्रांतों में विद्रोह करनेवालों को दण्ड देकर सरकार विद्रोह को दबा सकी। लेकिन १८५७ मई १० तारीख़ को मेरठ में सिपाहियों ने खुले रूप में विद्रोह किया।

मेरठ में जो ब्रिटीश सैनिक अफ़सर था, वह अयोग्य था। उसके अधीन २२०० गोरे सैनिक थे, फिर भी उसने विद्रोहियों को दबाने का किसी प्रकार का यत्न नहीं किया। विद्रोही सिपाही घोड़ों पर सवार हो दूसरे दिन सवेरे तक दिल्ली पहुँचे और उस पर क़ब्ज़ा कर लिया। वहाँ पर एक भी सैनिक दल गोरों का न था। वहाँ पर सिपाहियों ने कई गोरे लोगों का वध करके उनके घरों को ध्वस्त किया।

दिल्ली नगर के बाहर में स्थित एक तार घर से दो सिग्नलरों ने पंजाब के अधिकारियों को तार द्वारा यह समाचार दिया। दिल्ली के आयुधागार में लेफ़्टिनेंट विल्लभी और उसके आठ अनुचर थे। उन लोगों ने कुछ दिन तक युद्ध किया और आखिर न लड़ने की हालत में आयुधागार में विस्फोट पैदा किया। इससे विद्रोहियों का बड़ा नुक़सान हुआ। तो भी उन्होंने राजभवन को अपने अधीन करके बहादुरशाह द्वितीय को हिन्दुस्तान का सम्राट घोषित किया। तब बहादूरशाह वृद्ध हो चुका था और मुगल साम्राज्य के लिए नाम मात्र का राजा था।

ब्रिटीशवालों को दिल्ली पर अधिकार करने के लिए कई युद्ध करने पड़े थे, अनेक राजनैतिक चालें चलनी पड़ी थीं, ऐसी हालत में दिल्ली का विद्रोहियों के हाथों में जाना ब्रिटीश साम्राज्य के लिए बड़ा आघात साबित हुआ।

अनोखा मठ
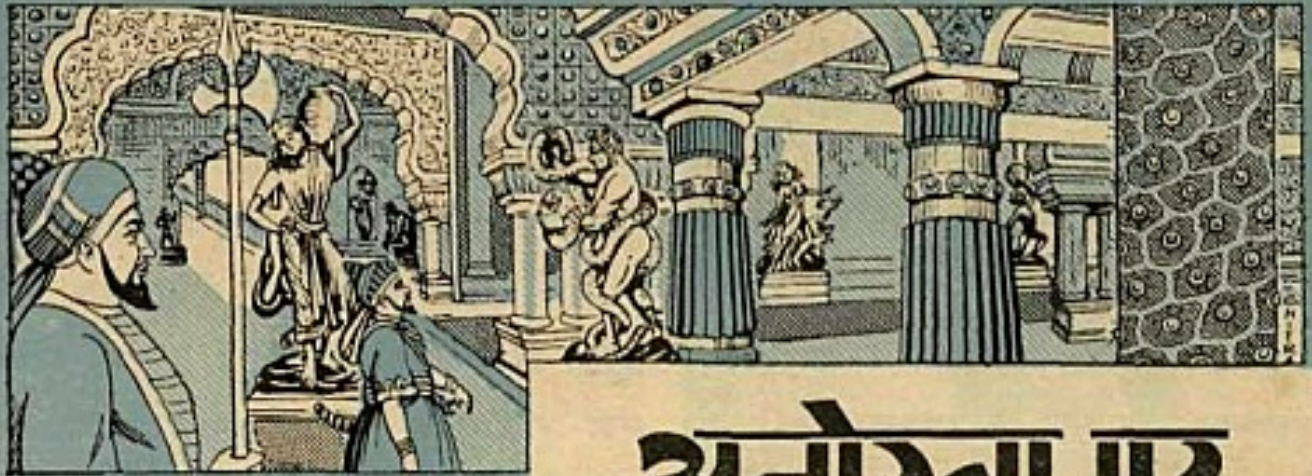
पुराने जमाने में एक राज्य पर एक सुलतान शासन करता था। उसके राज्य में लोग सुखी और धनी थे। लोगों से और व्यापारियों से भी कर के रूप में करोड़ों सिक्के खज़ाने में जमा हुये। इसलिए सुलतान ने दूर दूर से शिल्पियों को बुलवा कर एक अद्भुत महल बनवाया और उसमें नवरत्न जड़ा दिये।

उस महल की ख्याति के साथ सुलतान का यश भी सभी देशों में फैल गया। महल का निर्माण देख खुश होने के ख्याल से दूर दूर देशों से यात्री आने लगे। कवियों ने महल के सौंदर्य का वर्णन करते कविताएँ कीं। छोटे-छोटे राजाओं ने उसके शिल्प और उसकी बनावट की नक़ल करते छोटे आकार के महल बनाने का प्रयत्न किया। इस तरह की नक़लों की बढ़ती के साथ उस महल की ख्याति और बढ़ती गयी। सुलतान अपने महल की तारीफ़ सुन कर फूला न समाता था।

महल के बनने के बाद सुलतान बीस साल ज़िंदा रहा। उस महल में बितायी गयी प्रत्येक घड़ी उसे स्वर्ग जैसी प्रतीत हुई। उसने अपनी आखिरी घड़ियों में अपने पुत्र को बुलाकर कहा—"बेटा, मैंने अपनी सारी ताक़तें लगा कर इस महल का निर्माण कराया। इसके ज़रिये मेरा जन्म सार्थक हुआ है। इस से मेरा यश भी बढ़ गया है। मैं तुमको राज्य के साथ यह महल भी दे जा रहा हूँ। लेकिन तुम राज्य से भी इसे बड़े ध्यान से देखो! मैं इन बीस वर्षों में इसकी तरक्की करता ही रहा। ऐसी बात न होने दे कि मेरे साथ इसकी तरक्की भी बंद हो गयी है। तुम अपनी सारी शक्ति लगाकर इसका विकास करो और मुझसे भी ज्यादा यश कमाओ,

किशोरी लाल

तभी मेरी आत्मा को शांति मिलेगी।" यह कहकर उसने अपने प्राण छोड़े।

सुलतान का बेटा नये सुलतान ने अपने पिता के कहे अनुसार ही किया। अपने पिता के द्वारा निर्मित उस महल के चारों तरफ़ एक बहुत बड़ा बगीचा लगवाया। उसमें जहाँ-तहाँ सँगमरमर के टीले, मण्डप, और जलकुण्डों का निर्माण करवाया और उसके चतुर्दिक के प्रदेश को अत्यंत सुन्दर बनवाया। इसके पीछे अपार धन खर्च हुआ।

महल की तरक्की में लगभग खजाने का सारा धन खाली हो गया। पुराने सुलतान के ज़माने में देश जैसा सँपन्न था, वैसा अब न रहा। व्यापार तो तब भी चल रहा था, लेकिन पहले जैसे जहाज़ी व्यापार न था। पहले जैसे करोड़पति भी न थे। शासन के मामलों में सुलतान भी इतनी रुचि न दिखाता था। उसकी दृष्टि सदा राजमहल के चतुर्दिक के प्रदेश को और सुंदर बनाने में केंद्रित थी।

दूसरे सुलतान ने भी पच्चीस साल से ज़्यादा शासन किया और मरते वक़्त अपने पुत्र अब्दुल्ला को बुलाकर कहा–"बेटा, हमारा देश एक समय में कवि, वीर और व्यापार के लिए प्रसिद्ध रहा था, वे सब चले गये, अब न रहें। लेकिन यह अनोखा और अपूर्व महल शाश्वत हो खड़ा रह गया। तुम्हारे दादा द्वारा निर्मित इस महल की मैं ने काफ़ी तरक्की की है। मेरे बाद तुम भी अपना समय, शक्ति व धन लगा कर इसकी उन्नति के लिए काम करो और इसकी प्रतिष्ठा को बनाये रखने का प्रयत्न करो।" यह कहकर उसने आँखें बंद कीं।

सुलतान अब्दुल्ला जब गद्दी पर बैठा, तब खजाने में एक कौड़ी भी न थी। धन के बिना महल का खर्च उठाना और उसकी उन्नति करना असंभव था।

इसलिए अब्दुल्ला ने अपने वज़ीरों की सलाह से जनता पर नये नये कर लगाये। पहले ही लोग दरिद्रता से परेशान थे, दिन ब दिन करों का बोझ बढ़ते देख हाहाकार करने लगे। एक ओर करों के ज़रिये जो धन वसूल होता था, उसका उपयोग सुलतान ने जनता की भलाई में नहीं किया, बल्कि महल के चारों ओर के पुराने टीलों को गिराकर उनकी जगह बड़े बड़े नये टीले बनाने लगा। जलकुण्डों को मिट्टी से भरकर नये जलकुण्ड बनवाने लगा। देश में अराजकता फैलने लगी।

उन दिनों में उस राज्य में कहीं से एक फ़क़ीर आया। उसने लोगों से बात करके जनता के दुख का कारण समझ लिया। उसने मन में सोचा–"सुलतान में ज्ञान का लोप हो गया है, उसकी आँखें खुलवानी हैं।" यह सोचकर फ़क़ीर सीधे राजमहल के पास पहुँचा और द्वारपालों से कुछ कहे बगैर महल के भीतर चला गया। फ़क़ीर को रोकने की हिम्मत उन में न थी।

फ़क़ीर सीधे भोजनालय में गया और बैठकर रसोइयों को आदेश दिया–"खाना परोसो!" उन लोगों ने बिना कुछ कहे फ़क़ीर को खाना परोसा। फ़क़ीर भोजन

समाप्त कर सुलतान के शयनकक्ष में गया और उसके कोमल बिस्तर पर लेटकर निश्चितता के साथ सो गया।

अब्दुल्ला को मालूम हुआ कि कोई फ़कीर राजभवन में आया है। उसने लौटकर देखा तो फ़कीर नींद का सुख ले रहा है। वह फ़कीर के जागने तक इंतज़ार करता रहा, तब बोला—"फ़कीरों के वास्ते हमने एक बढिया मठ बनवाया है, वहाँ क्यों नहीं गये?"

"क्या यह मठ नहीं है?" फ़कीर ने पूछा। "नहीं, यह राजमहल है। मेरे दादा ने इसका निर्माण किया है। उनके समय से हमारा परिवार इसी में रहता है।" अब्दुल्ला ने जवाब दिया।

"तुम्हारे दादा इस महल में कितने साल रहें?" फ़कीर ने पूछा।

"बीस साल।" अब्दुल्ला ने जवाब दिया।

"तुम्हारे बाप!" फ़कीर ने फिर पूछा।

"पचास साल!" अब्दुल्ला ने कहा।

"तुम कितने सालों से रहते हो?" फ़कीर ने पूछा।

"मैं अपनी पैदाइश से ही इस में रहता हूँ।" अब्दुल्ला ने जवाब दिया।

"तुम्हारी उम्र कितनी है?" फ़कीर ने फिर पूछा।

"तीस साल की है।" अब्दुल्ला ने कहा।

"अगर तुम्हें पूर्ण आयु मिले तो तुम इस में ७० साल रहोगे, बस, यही न! इसी के लिए तुम कहते हो कि यह महल मठ नहीं है? इस मठ के वास्ते जनता से ज़बर्दस्ती कर वसूल कर उनको चूस रहे हो! कैसी भूल करते हो!" यह कहते फ़कीर उठकर वहाँ से चला गया।

अब्दुल्ला को ज्ञानोदय हुआ। उसने जनता की भलाई के लिए शासन करना शुरू किया।

शिथिलालय

[१२]

[शिखिमुखी और विक्रमकेसरी पुजारी के छिपे गुफ़ा के पास पहुँचे, लेकिन वह उस में न था। सवर गीध को साथ ले पहाड़ की घाटी को पार करते पुजारी दिखाई पड़ा। शिखिमुखी आदि ने उसका पीछा किया। पुजारी ने घाटी में स्थित शिलाओं को शिखिमुखी को दिखाते हुये कहा कि वहाँ पर आ जाओ। इसके बाद–]

शिथिलालय के पुजारी की बातें सुनकर शिखिमुखी आदि को गुस्सा आया। वे तेज़ी से घाटी में उतरकर शिलाओं के सामने खड़े पुजारी और सवरगीध के निकट पहुँचे ही थे कि शिलाओं के पीछे से दस गोंड ज़ोर से चिल्लाते आगे कूद पड़े। उनका नेता एक घोड़े पर सवार था और शिला की ओट से बाहर आकर गरजते स्वर में बोला–"कौन हो तुम? शिखिमुखी और नागमल्ली? शबर और सवर जाति के नेताओं के बच्चे? तुम लोग मेरे बंदी हो। देखता हूँ–तुम्हारे पिता कितनी मात्रा में धन देकर तुम दोनों को छुड़ा ले जाते हैं।"

"वाह! बड़ा अच्छा है! असली कहानी यही है। समझ गये हो, शिखी!" यह कहते शिथिलालय का पुजारी ठठाकर हँस पड़ा।

"वह गोंड लुटेरों का नेता है। बड़ा गोंड है, केसरी?" शिखिमुखी ने भाला उठाते हुए कहा।

"यह दुष्ट पुजारी का बिछाया हुआ एक और जाल है। हमें सावधान रहना है, विक्रम।" नागमल्ली ने बर्छी चमकाते कहा।

विक्रमकेसरी चुपचाप बिजली की भांति आगे कूद पड़ा। घोड़े के निकट पहुँचकर उसने बड़े गोंड के सर पर भाले से दे मारा।

उस प्रहार से गोंड घोड़े पर से नीचे गिर पड़ा, तब घोड़े की लगाम पकड़कर विक्रम बोला–"शिखी! बातों में उलझकर देरी करना खतरनाक है। तुम दोनों इस घोड़े पर चढ़कर भाग जाओ। पुजारी ने तुम दोनों के वास्ते ही यह जाल बिछा रखा है।" यह कहकर विक्रम ने शिखिमुखी का कंधा पकड़कर खींच लिया और उसे ज़बर्दस्ती घोड़े पर चढ़ाया। नागमल्ली इसका विरोध करने जा रही थी। विक्रम ने उसे मौक़ा नहीं दिया। उसे भी शिखी के पीछे घोड़े पर बिठाकर घोड़े की बगल में ज़ोर से एक लात मारी। घोड़ा देखते देखते हवा से बात करने लगा।

यह सब पल-भर में हो गया। बड़े गोंड के अनुचर उछलकर चिल्लाते आगे आये, तब तक शिखी और नागमल्ली का घोड़ा घाटी में दौड़ा जा रहा था। बड़ा गोंड कराहते उठ खड़ा हुआ और बोला–"तुम लोग उस घोड़े का पीछा करके उनको पकड़ लो। यहां पर जो लोग हैं उनकी खबर मैं और पुजारी प्रभु हम दोनों देख लेंगे। हूँ! देखते क्या हो? पीछा करो!"

चार पांच गोंड चिल्लाते घोड़े के पीछे दौड़ने लगे। शिथिलालय का पुजारी वहीं खड़े हो दांत पीसते हुए बचे हुए गोंडो से

बोला–"विक्रमकेसरी को जान से पकड़ लो, इसे शिथिलेश्वरी देवी को बलि देनी है। इससे अच्छा आदमी दुनियां में कोई नहीं मिल सकता। आज हमें बड़ा अच्छा मौक़ा मिला है। इसे हाथ से जाने न देना।"

विक्रमकेसरी अपने तीनों अनुचरों को सावधान कर एक एक क़दम पीछे बढ़ाते पहाड़ की तरफ़ चलने लगा। गोंड लोग भयंकर गर्जन करते उनको मारने के लिए आगे बढ़े।

"बड़े गोंड, तुमने बड़ी ग़लती की। तुम और साठ लोगों को अपने साथ लाते तो तुम्हारा काम बन जाता। यह विक्रम केसरी बड़ा घमंड़ी है। उसे घायल किये बिना पकड़ना मुश्किल है। शिथिलेश्वरी देवी को घायल व्यक्ति की बलि देना बड़ा अपराध है। इसलिए इस वक़्त विक्रमकेसरी को छोड़कर हमें अपने निवासों में जाना उचित होगा। उसे इस बार छोड़ दो।" पुजारी बोला।

"पुजारी प्रभू! देखिए! वह मेरे अनुचरों को शिलाओं के चारों तरफ़ कैसे दौड़ाकर परेशान कर रहा है! आप एक काम कीजिये न? मंत्र का प्रयोग कर उसके हाथ-पैरों को हिलने से रोक दीजिए? वे जहाँ के तहाँ रुक जायेंगे। हम परेशानी से भी बच सकते हैं। जहाँ मंत्र से काम चल सकता है, वहाँ बेकार लड़ाई क्यों करें?" बड़े गोंड ने कहा।

इस पर ज़ोर से हँसते हुए पुजारी बोला–"क्या कहा, गोंड? मेरे मंत्र की महान शक्ति का प्रयोग इस दुष्ट को पकड़ने में इस्तेमाल करूँ! यह बड़ी भूल होगी। मेरे कहे मुताबिक करो। तुम अपने अनुचरों को वापस बुलाओ, या नहीं तो उनको भी शिखिमुखी और नागमल्ली को पकड़ने भेज दो।"

"ऐसा ही चलेंगे। लेकिन मुझे शंका हो रही है कि तुम्हारे अनुचर उन लोगों को पकड़ सकेंगे कि नहीं। जब से मैं इन प्रदेशों में आया हूँ तब से न मालूम सब जगह विघ्न ही पैदा हो रहे हैं। लगता है कि विन्ध्याचल के दक्षिण में शिथिलेश्वरीदेवी का प्रभाव कम मालूम होता है।" पुजारी निराश से बोला।

"हो सकता है, पुजारी साहब! हमें इन बंदर बदमाशों से क्या मतलब? सीधे ब्रह्मपुत्र नदी की घाटियों में चले जायेंगे? चलिए। क्या मैं आकाश मार्ग में उड़ूँ?" यह कहते सवर गीध हाथ उठाकर हिलाने लगा।

पुजारी ने सवर गीध की गर्दन पर ज़ोर से हाथ दे मारा और बोला—"उड़ने के लिए कोई वक़्त का ख्याल नहीं होता? यह वायस का वक़्त है। गीध इस वक़्त नहीं उड़ सकते। ज़मीन से लगकर ही रहेंगे। अब मुँह बंदकर मेरे पीछे चलो।" यह कहते वह रवाना हुआ।

गोंड नेता के साथ पुजारी तथा अन्य गोंड उसके निवास गगन-गुफ़ा की तरफ़ निकल पड़े। उसी वक़्त विक्रमकेसरी शेष

"जी हुज़ूर, पुजारी!" यह कहते बड़ा गोंड सर झुकाकर पुजारी को नमस्कार करते हुए विक्रमकेसरी से लड़नेवाले अपने अनुचरों को वापस लौटने के लिए चिल्ला उठा। उसकी चिल्लाहट सुनते ही गोंड लोग विक्रमकेसरी से घायल हुए अपने एक साथी को कंधे पर डाल अपने नेता के पास वापस लौट आये।

"प्रभू, पुजारी! अब हम अपनी गगन-गुफ़ा में चले। मेरे अनुचर शिखिमुखी और नागमल्ली को वहीं पकड़कर ले आयेंगे। आप थोड़ी देर आराम कीजिये।" बड़े गोंड ने कहा।

शबरों के साथ शिखिमुखी और नागमल्ली के पीछे घाटी की ओर दौड़ पड़े। विक्रमकेसरी को घोड़े पर सवार हुये शिखी और नागमल्ली साफ़ दिखायी दे रहे थे और उनका पीछा करनेवाले गोंडों को भी उसने देखा।

घोड़ा उस ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी मार्ग पर ठीक से दौड़ नहीं पाता था। मौक़ा पाकर गोंड उसे घेरने की चेष्टा कर रहे थे।

विक्रमकेसरी चिल्ला उठा–"शिखी और मल्ली! हम आ रहे हैं। पुजारी और गोंडों का नेता दोनों भाग गये।" यह कहते वह भी उनके पीछे दौड़ने लगा। लेकिन विक्रमकेसरी के उनसे मिलने के पहले ही दो-तीन गोंड रास्ता काटकर शिलाओं पर कूदते आगे गये और घोड़े को रोकने लगे।

शिखिमुखी तलवार के साथ और नागमल्ली भाले से उन गोंडों को घोड़े के निकट आते रोकने लगे। एक-दो मिनट बाद शिखिमुखी ने घोड़े की लगाम दूसरी ओर खींच ली और उसे घाटी की ओर से मोड़कर पहाड़ पर चढ़ाने लगा। उसे विक्रमकेसरी की चिल्लाहट साफ़ सुनाई पड़ रही थी। उसने सोचा कि केसरी पहाड़ पर उतरकर उसकी तरफ़ बढ़ा चला आ रहा है।
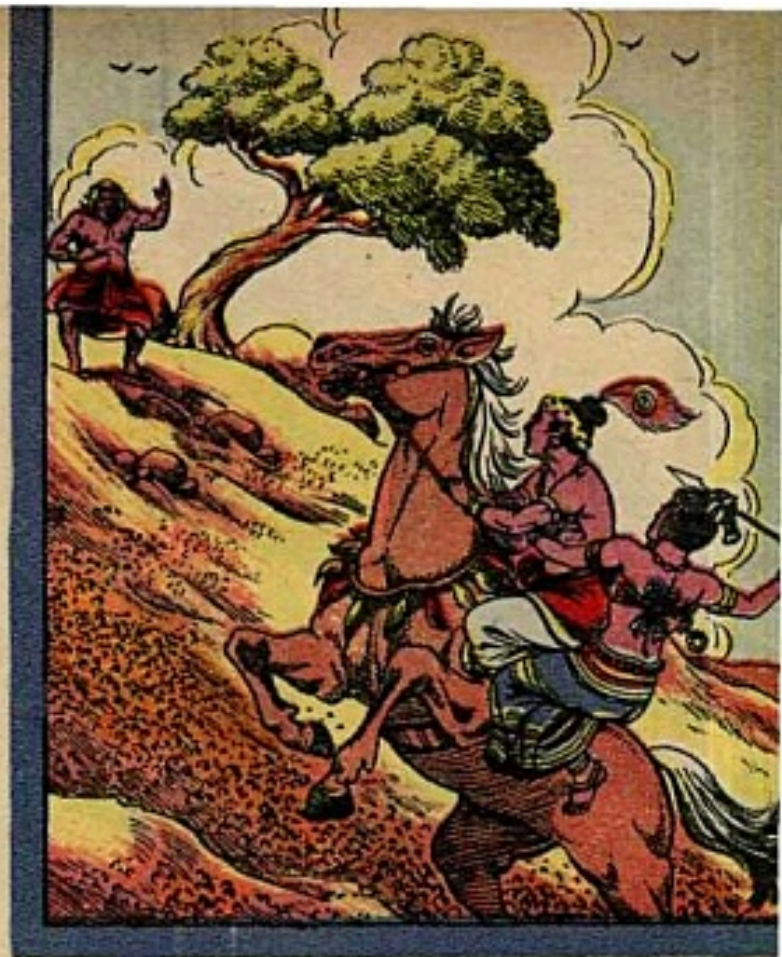
शिखिमुखी को पहाड़ पर घोड़े को चढ़ाते देख उसे घबरा देने के ख्याल से गोंड लोग तालियाँ बजाकर शोरगुल मचाने लगा। घोड़ा शोरगुल सुनते ही घबड़ाकर पिछली टांगों पर उठ खड़ा हुआ। खतरे का अनुमानकर नागमल्ली ने अपने हाथ के भाले को गोंड पर निशाना लगाकर फेंक दिया। परंतु उस चोट से बचकर वह गोंड और जोर से चिल्लाने लगा।

शिखिमुखी और नागमल्ली को खतरे में फँसे देख विक्रमकेसरी ने ढेल बांसवाले शबर को आदेश दिया–"तुम निशाना लगाकर घोड़े के सामने खड़े गोंड को नीचे गिरा दो। उनके पीछे दौड़नेवालों की खबर हम लोग बाद को ले सकते हैं।"

शबर ने ढेल बांस में पत्थर रखकर, उसे दो बार ज़ोर से घुमाकर गोंड पर फेंक दिया। वह झुयें आवाज़ करते गोंड की छाती पर जा लगा। वह उछलकर चिल्लाते गिर पड़ा और नीचे की ओर लुढ़कने लगा। घोड़े की ओर गोंड को लुढ़कते देख वह भी घबरा उठा और पीछे घूमने के ख्याल से ज्यों ही घोड़े ने एक पत्थर पर क़दम रखा, त्यों ही वह फिसल गया और गिरकर ढलाऊँ पहाड़ी पर वह भी लुढ़कने लगा। घोड़े के साथ शिखिमुखी और नागमल्ली भी नीचे गिरकर लुढ़कने लगे।

गोंड इस दृश्य को देख खुशी के मारे कोलाहल करते, तालियाँ पीटते चिल्लाने लगे–"पकड़ो! पकड़ो! भाग न जायें!" वे सब शिखी और नागमल्ली की तरफ़ टूट पड़े। वे शिखी के पास पहुँच भी न पाये थे कि बाण चढ़ाकर विक्रम ने भीड़ पर छोड़ दिया। वह बाण एक गोंड की छाती पर जा लगा, वह चिल्लाते नीचे गिर पड़ा। इतने में शिखी उठ खड़ा हुआ और उसके समीप आनेवाले के पेट पर एक लात मारी तथा उसका भाला छीन लिया।

लेकिन इस बीच में घोड़े पर से गिर जाने के कारण नागमल्ली बेहोश हो गयी थी। उसे दो गोंड अपने कंधों पर डाल घाटी को पार करने के ख्याल से दौड़ने लगे। बाक़ी गोंडों ने थोड़ी देर तक विक्रम का सामना किया, इतने में उनकी तरफ़ आनेवाले विक्रम और अन्य शबरों

को देख वे घाटी में भाग खड़े हुए और देखते देखते शिलाओं की ओट में ओझल हो गये।

शिखिमुखी ने विक्रमकेसरी को इशारा कर भागनेवाले गोंडों का पीछा किया। लेकिन घोड़े पर से गिरने के कारण शिखिमुखी के पैर में मोच आ गया था। जिससे वह तेजी से दौड़ न पाता था। तब विक्रमकेसरी दौड़ते उसके निकट आ पहुँचा।

"विक्रम! बड़ा अनर्थ हो गया है। हम सब नागमल्ली को बचा न सके, यह बात मालूम होने पर नागमल्ली का पिता ही नहीं, मेरे बाप भी मुझसे घृणा करेंगे। हम गोंडों के दल के साथ लड़े बिना नागमल्ली की रक्षा नहीं कर सकेंगे। तुम शबर बस्ती में जाकर पच्चीस-तीस जवानों को जल्द साथ ले आओ। इस बीच में उनका पीछा करते हुए इस बात का पता लगाऊँगा कि वे नागमल्ली को कहाँ ले जा रहे हैं।" शिखिमुखी ने विक्रम से कहा।

विक्रमकेसरी ने कोई आपत्ति उठानी चाही, परंतु शिखिमुखी ने उसका ख्याल किये बिना जल्दी मचाया। विक्रमकेसरी लाचार हो एक शबर को शिखी के साथ छोड़कर बाक़ी दो शबरों को अपने साथ लिये बस्ती की ओर चला गया।

शिखिमुखी गोंडों के पद-चिह्नों का अनुसरण करते आध घंटे बाद पहाड़ी तलहटी में स्थित एक जंगल में पहुँचा। उसे पेड़ों की ओट में से कई कंठों की आवाजें सुनाई देने लगीं। उसने उपने साथी शबर को चुप रहने का आदेश दे, पास के एक पेड़ पर चढ़कर नीचे देखा। पेड़ों के बीच एक जगह शेर का पिंजड़ा था, गोंड नागमल्ली को धीरे से उस ओर ढोते ले जा रहे थे। (और है)

अजातशत्रु

हठी विक्रमादित्य पेड़ के पास पुनः लौट आया। पेड़ पर से लाश उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुमको इस दशा में देखनेवाले केवल असमर्थ समझकर भ्रम में पड़ जायेंगे, जैसे अजातशत्रु को देख कलिंग राजा भ्रम में पड़ गया था। श्रम को भुलाने के लिए मैं तुमको अजातशत्रु की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।"

वह यों कहने लगा:

प्राचीनकाल में एक चालुक्यवंशी राजा था। वह बड़े ही शांत स्वभाव का था। क्रोध उसमें नाममात्र के लिए भी न था। दया का भाव उसमें कूट कूटकर भरा था। अपराधियों को दण्ड देना राजा के दैनिक कृत्यों में एक नियम था।

वेताल कथाएँ

तो भी उसने कभी किसी को अपराध से बढ़कर सज़ा नहीं दी थी। उससे सज़ा पाये हुए लोग भी उसकी दयालुता की तारीफ़ किया करते थे। ऐसे गुणों के कारण ही उस राजा को अजातशत्रु नामक उपाधि प्राप्त हुई। यही उपाधि बाद को उसके नाम के रूप में बदल गयी।

अजातशत्रु के राज्य के पड़ोस में कलिंग राज्य था। कलिंग राजा स्वभाव से ही दुष्ट, ईर्ष्यालु और अहंकारी था। उसका शासन भी अस्त-व्यस्त था। कलिंग राज्य में दाने दाने के लिए तरसनेवाले अनेक पंडित, विद्वान और कवि भी अजातशत्रु के आश्रय में गये और सुखपूर्वक जीवन-यापन करते ख्याति भी प्राप्त करने लगे। छोटे-छोटे पेशेवर भी कलिंग से प्रवासी बनकर अजातशत्रु के राज्य में आकर स्थिर निवासी बन गये। वे आराम से दिन काटने लगे। कलिंग राजा यह सब सहन न कर सका। सब कोई अजातशत्रु की प्रशंसा करते थकते न थे, इससे कलिंग राजा को और दुख होने लगा। कलिंग राज्य की सीमा पर 'स्थित अजातशत्रु के राज्य के गाँवों पर कलिंग के सिपाही जब तब हमला करते और वहाँ की जनता से मार खाकर वापस लौटते। जो लोगों के हाथों में पड़ जाते, वे भी सज़ा पाये बिना लौट आते थे।

कलिंग राजा का यह विचार था कि अजातशत्रु अच्छे शासक के रूप में भले ही नाम कमावे, लेकिन युद्ध में उसकी बराबरी नहीं कर सकता। क्योंकि ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जब कि अजातशत्रु ने अपने अन्य पड़ोसी छोटे से छोटे राज्य को भी कभी डराया या धमकाया हो। वह हमेशा पड़ोसी राजाओं से मैत्री स्थापित करने का प्रयत्न ही किया करता था।

ऐसे असमर्थ व्यक्ति पर अचानक हमला करके, उसके द्वारा सेनाओं की तैयारी करने के पहले राजधानी पर अधिकार करने और अजातशत्रु का वधकर उसके राज्य को हड़पने की कलिंग राजा ने योजना बनायी।

राजदूत द्वारा संदेश अथवा युद्ध की तैयारियों के विना कलिंग राजा को अपनी सेना सहित युद्ध के लिए आने का समाचार अजातशत्रु को मिला। तुरंत अजातशत्रु ने अपने देश में डुग्गी पिटवा दी कि जो लोग युद्ध के लिए तैयार हैं, वे तुरंत रवाना हो जाये! ढ़िढोरा पीटने के दो घडियों के अन्दर अन्दर राज्य के सभी पुरुष जो भी आयुध मिले, लेकर कलिंग राजा से युद्ध करने तैयार हो गये।

कलिंग सेना अजातशत्रु के राज्य में प्रवेश कर थोड़ी ही दूर आगे बढ़ी थी कि अजातशत्रु की सेनाओं ने चारों तरफ़ से उनको घेर लिया। अजातशत्रु की सेनाओं ने कलिंग की सेनाओं के छक्के छुड़ा दिये। कलिंग राजा भाग भी न सका, आखिर दुश्मन के हाथ आया। उसकी बाँहें खींचकर बांध दी गयीं और उसे अजातशत्रु के सामने सैनिक ले आये।

अजातशत्रु के सरदारों ने अनेक प्रकार की सलाहें दीं। कुछ लोगों ने कहा कि कलिंग राजा का शिरच्छेद करना चाहिए। कुछ लोगों ने बताया कि ऐसे दुष्ट की आँखें फोड़ देनी चाहिए। कुछ लोगों ने कहा कि उसके शरीर के टुकड़े टुकड़े कर देने चाहिए। कलिंग राजा उन सब का क्रोध देखकर कांप उठा।

"उन्हें कुछ करने की जरूरत नहीं। उनके बंधन खोलकर छोड़ दीजिए।" अजातशत्रु ने कहा। लेकिन सरदारों को यह काम पसंद न था, फिर भी उन्होंने कलिंग राजा को छोड़ दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन्, अजातशत्रु का दुशमन कलिंग राजा एक ही था। उसका वध करके निश्चित होने के बदले उसने क्यों उसे छोड़ दिया? क्या इसलिए कि वह अपनी अजातशत्रु नामक उपाधि को सार्थक बनाना चाहता था या ऐसा करने से कलिंग का राजा उसका सदा के लिए मित्र बना रहेगा। इसलिए? इस प्रश्न का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमादित्य बोले–"अजातशत्रु का कलिंग के राजा को छोड़ने के कारण वे नहीं हैं। यह सच नहीं है कि कलिंग के राजा को मारने से अजातशत्रु का कोई शत्रु न रहेगा। उसके पुत्र और पोते भी अजातशत्रु के सदा के लिए शत्रु बने रहेंगे। वे कलिंग के राजा की मृत्यु का बदला लेने के लिए यथाशक्ति कोशिश करेंगे। इसके अलावा कलिंग के राजा को छोड़ देने से अजातशत्रु के किसी प्रकार का नुक़सान नहीं है। कोई भी राजा पड़ोसी राज्य पर चढ़ाई करने जाता है तो जीतने की आशा से ही जाता है। कलिंग का राजा बड़ी तैयारी करके बिना सूचित किये युद्ध करने आया। तो भी, वह बुरी तरह से हार गया। उसकी सेना का बहुत-सा हिस्सा नष्ट हो गया। इसलिए कलिंग का राजा फिर ज़िंदगी-भर ऐसी भूल करने का साहस न करेगा। उसके वारिसों को भी वह युद्ध करने से रोक देगा। यही सोचकर अजातशत्रु ने कलिंग के राजा को छोड़ दिया। ऐसा करके उसने यह साबित किया कि उसकी उपाधि सार्थक है।"

राजा के इस तरह मौनभंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पागल

बगदाद के पागलख़ाने में दो पागलों के बीच बड़ी गहरी दोस्ती थी। उनमें एक अमीर था। व्यापार में अपना सब कुछ खोकर वह पागल बन गया था। दूसरा अच्छा पढ़ा-लिखा था। किसी नारी से प्यार करके उसके द्वारा तिरस्कृत होकर पागल हो गया था।

अमीर आदमी रोज़ जेल के अधिकारियों के पास जाता और यह प्रार्थना करता– "मेरे प्रतिद्वन्द्वी व्यापारियों ने ईर्ष्यावश यह अपवाह पैदा की है कि मैं पागल हूँ और मुझे इस अस्पताल में भिजवा दिया है। लेकिन वास्तव में मैं पागल नहीं हूँ। कृपया मुझे घर भिजवा दीजिए।" लेकिन उसकी प्रार्थना को सुननेवाला कोई न था।

एक दिन अमीर आदमी सब के आँख बचाकर एक ऊँची दीवार पर चढ़ बैठा और सवारी करनेवाले जैसा अभिनय करते "चल, चल" कहते दीवार को हाँकने लगा।

अस्पताल के अधिकारी ने सोचा कि वह आदमी दीवार पर से गिरकर मर जाएगा तो अस्पताल बदनाम हो जाएगा। इसलिए उसने अमीर से उतर आने को गिड़ गिड़ाया। लेकिन पागल ने उसकी बात न मानी।

"उतर आओगे तो तुरंत तुमको घर भेज दूँगा।" अधिकारी ने वचन दिया। लेकिन इस पर भी कोई फ़ायदा न रहा। पागल "चल, चल" कहते दीवार को हाँक रहा था।

इतने में उसका दोस्त आया और अधिकारी से बोला–"मुझे अगर घर भेज दोगे तो मैं अपने मित्र को पल-भर में दीवार पर से उतार दूँगा।"

राम निवास

अधिकारी ने यह बात मान ली। पढ़े-लिखे आदमी ने एक बड़ी कैंची लाकर पागल से कहा–"देखो! मैं इस दीवार को काट रहा हूँ। तुम नीचे गिर जाओगे। खबरदार!"

दीवार पर बैठा पागल अपने मित्र के हाथ में एक बड़ी कैंची देख बोल उठा–"ठहरो, ठहरो! मुझे उतर आने दो। फिर दीवार काट सकते हो।" यह कहते वह दीवार पर से उतर आया। अस्पताल के अधिकारी ने उसको तुरंत जेल में रखवाया और दूसरे को रिहाकर घर भेज दिया।

* * *

पागल लोग केवल मात्र पागलखाने में ही नहीं होते, लेकिन जेलखाने से बाहर भी कई पागल और बावरे होते हैं।

मुल्ला नासरुद्दीन नामक एक आदमी ने एक बार स्नानागार में जाकर खूब स्नान किया। उसने देखा कि उसी की तरह कुछ लोग स्नान करके फ़र्श पर लेटकर खुर्राटे लेते सो रहे हैं। उसे भी बड़ी नींद आयी। लेकिन उसे संदेह हुआ कि अगर वह भी उनके बीच सो जाएगा तो उसे पहचानना मुश्किल होगा। इसलिए वह एक छोटी-सी सुराही कमर में बाँधकर सो गया।

थोड़ी देर बाद सोनेवालों में से एक आदमी उठा। मुल्ला की कमर में बंधी सुराही को देख ललचा गया, उसे निकाल कर अपनी कमर में बाँध ली और फिर सो गया।

मुल्ला नींद से जाग पड़ा तो उसे मालूम हुआ कि सुराही उसकी कमर में नहीं है बल्कि दूसरे की कमर में बंधी हुई है। इसलिए उसने उस व्यक्ति को जगाकर पूछा—"देखो, भाई! अगर मैं मैं हूँ तो मेरी सुराही कहाँ? अगर तुम मैं हूँ तो मैं कौन हूँ?"

* * *

पर्शिया का एक ज़मीन्दार घोड़े पर सवार हो कहीं जा रहा था। उसका एक नौकर घोड़े के आगे दौड़ रहा था। शाम तक वे एक गाँव में पहुँचे, रात को वहीं रहने का उन दोनों ने निश्चय किया।

दोनों के भोजन करने के बाद ज़मीन्दार ने अपने नौकर से कहा—"देखो, दिन-भर दौड़कर तुम थक गये हो, इसलिए आधी रात तक तुम सो जाओ, मैं घोड़े का पहरा देता रहूँगा। आधी रात के वक़्त तुमको जगाकर मैं सो जाऊँगा। सवेरे तक तुम पहरा देते रहो।"

नौकर ने यह बात मान ली और सो गया। आधी रात तक घोड़े का मालिक जागता रहा, फिर नौकर को जगाकर बोला–"अब सवेरे तक पहरा देना तुम्हारा काम है।" यह कहकर वह सो गया। इसके थोड़ी देर बाद नौकर भी सो गया।

एक घंटा बाद मालिक ने आँखें खोलीं और नौकर से पूछा–"क्या कर रहे-हो?"

"सोच रहा हूँ!" नौकर ने जवाब दिया।

"क्या सोच रहे हो?" मालिक ने फिर पूछा।

"काँटे को कौन पैने बना रहे हैं? यही सोचता हूँ।" नौकर ने कहा।

"शाहबाश! तुम अक्लमंद हो।" यह कहकर मालिक फिर सो गया।

एक घंटे बाद फिर वह जाग पड़ा और नौकर को पुकारकर पूछा–"अब क्या करते हो?"

"सोच रहा हूँ।" नौकर ने कहा।

"क्या सोच रहे हो?"

"जमीन में कुदाली के धँसाने पर गड्ढा होता है, तब वहाँ की मिट्टी क्या हो जाती है, यही सोचता हूँ।" नौकर ने कहा।

"वाह! तुम बुद्धिशाली हो।" यह कहकर मालिक फिर सो गया।

एक घंटे बाद फिर मालिक जाग पड़ा, और नौकर से पूछा–"क्या करते हो?"

नौकर ने इस बार भी यही जवाब दिया–"सोच रहा हूँ।"

"क्या सोच रहे हो?" मालिक ने पूछा।

"कल आप घोड़े पर सवार हुए, मैं घोड़े के आगे दौड़ता रहा। अब घोड़ा नहीं रहा। लगाम किसको ढोना है? यही सोच रहा हूँ।" नौकर ने जवाब दिया।

नयी ज़िन्दगी

एक गाँव में चन्द्रकांत नामक एक जुलाहा था। वह क़ीमती कपड़े बुनने में निपुण था। इसलिए उसने खूब धन कमाया। चूंकि उसके पास काफ़ी धन था, इसलिए चन्द्रकांत के पास रिश्तेदार, दोस्त सब आने-जाने लगे। सब कोई उसकी खूब तारीफ़ करते। जो भी आता, उसका अच्छा आदर-सत्कार कर भेजता। उसे किसी चीज़ की कमी न होने देता। जो भी कुछ माँगता, उसकी मदद करता। इस दानशीलता के कारण धीरे धीरे उसकी सारी संपति कपूर की भांति गल गयी और उसके बुरे दिन आये। करघों की मरम्मत कराने के लिए भी उसके पास पैसे न थे। आखिर उसकी हालत यहाँ तक पहुँची कि एक जून खाता तो दूसरे दिन उसे दर दर जाकर भीख माँगनी पड़ती।

चन्द्रकांत ने यह सोचकर अपने रिश्तेदारों से एक हज़ार रुपये उधार माँगा कि उससे करघों की मरमत कराकर फिर कपड़े बुनने का काम चालू किया जाय। लेकिन किसी ने उसकी मदद न की। सब ने कोई न कोई बहाना बताकर मदद देने से इनकार किया। कुछ लोगों ने डांटते हुए कहा–"जब धन था, तब पानी की तरह बहाया, आखिर यह हालत न होगी तो क्या होगी?" इन सब आदमियों ने एक ज़माने में चन्द्रकांत से मदद पायी थी और उसकी बड़ी तारीफ़ भी की थी।

देरी से ही सही चन्द्रकांत ने सबक़ सीखा। अब करघे का काम करना संभव न था, इसलिए मजदूरी करके अपने परिवार का पोषण करने का निश्चय किया और मजदूरी करने लगा।

अजय कुमार

संपत्ति मानी जायगी! उस पर किसी दूसरे का कोई अधिकार न होगा! इसलिए न मालूम, किस की क़िस्मत कैसी है! कौन जाने!"

इन बातों ने मज़दूरों में खूब उत्साह पैदा किया। पहला दिन खुदाई का काम बड़ी तेजी से चला। काम करते वक़्त चन्द्रकांत के मन में कोई विचार मचलता ही रहा। उस रात को घर लौटकर उसने उस विचार को कार्यरूप में लाने का प्रयत्न किया।

उसने एक पुरानी हांड़ी में मिट्टी के बर्तन के टुकड़े भर दिये, उसके मुँह पर एक टीन छिपकाया। आधी रात के वक़्त तालाब खुदनेवाली जगह में जाकर मिट्टी में गाड़ दी और वापस लौटा।

दूसरे दिन फिर मज़दूर काम पर आये। चन्द्रकांत के थोड़ी देर तक खोदने के बाद उसका कुदाल हांड़ी से जा लगा और 'खन्' की आवाज़ आयी। बाजू में काम करनेवाले "सोने की हांड़ी!" चिल्लाते दौड़े आये। चन्द्रकांत ने ऊपर की मिट्टी हटाकर हांड़ी तिकाली।

"वाह, तुम्हारी क़िस्मत को क्या कहे! जरा हांड़ी तो खोलो, देखें, भीतर

इतने म संयोग से गाँव में एक बहुत बड़ा तालाब खुदवाने का निर्णय हुआ। इस काम की देखभाल के लिए एक न्याय शील बुजुर्ग नियुक्त हुआ। वहाँ पर दूर दूर से मज़दूर आये। एक कुदाल लेकर चन्द्रकांत भी वहाँ पहुँचा।

तालाब खुदवानेवाले बुजुर्ग ने शायद जल्दी काम कराने के ख्याल से काम शुरू होने के पहले मजदूरों से यों कहा—"तालाब के खोदते स्थान पर निधि या भण्डार हो सकते हैं। सोने की मुद्राओं से भरी हांड़ी अगर किसी मज़दूर की कुदाली से लग गयी तो वह उसी की

क्या है!" मज़दूरों ने कहा। तालाब खुदवानेवाला बुजुर्ग भी यह जानने को ललचा उठा कि उसके अंदर क्या है?

"इस निधि की पूजा करनी है। अच्छा मुहूर्त देखकर मंत्रोच्छारण करते इसे खोलना है। बड़ी दावत देनी है।" चन्द्रकांत ने कहा।

"तुम्हारी पाँचों उंगलियाँ घी में हैं। अब तुम मज़दूरी क्यों करोगे? हांड़ी लेकर घर जाओ।" बुजुर्ग ने कहा।

चन्द्रकांत हांड़ी सर पर रखे, कुदाल हाथ में ले घर लौट आया।

लेकिन दूसरे दिन फिर हाथ में कुदाल ले काम पर हज़िर चन्द्रकांत को देख बुजुर्ग चकित होकर बोला–"तुम्हारा दरिद्र तो दूर हो गया, फिर मज़दूरी करने क्यों आये हो?" बाक़ी मजदूरों को भी यही संदेह हुआ।

"क्या बताऊँ, साहब? पुरोहित से पूछा तो उन्होंने मेरी जन्मपत्री और हांड़ी के मिलने का मुहूर्त देख कहा कि तीन साल तक उसे खोला नहीं जा सकता। उसके बाद कई ग्रहों की शांति करके, अन्नदान करना है। तब तक मेरा गुज़ारा कैसे होगा?" चन्द्रकांत ने कहा।

उसके प्रति सब की सहानुभूति पैदा हुई। वह भी और लोगों की भांति कुदाल लिये काम कर रहा था, फिर भी वे इज्जत की दृष्टि से उसे देखते थे। क्योंकि वह धनी बनने जा रह है न!

चन्द्रकांत को निधि मिलने का समाचार उसके रिश्तेदारों में बिजली की भांति फैल गया। उसकी तारीफ़ करके उसकी दृष्टि में भले बनने के ख्याल से एक एक करके उसके घर आने लगे।

"क़िस्मतवर को ख़ुदा भी बिगाड़ नहीं सकता! तुमको निधि मिलने की खबर सुनकर हम बहुत खुश हुए। बित्ते-भर

पेट के लिए तुम्हें मज़दूरी करते देख हमें कितना दुख हुआ, भगवान ही जानता है।" रिश्तेदारों ने कहा।

"अरे क्या बताऊँ! मेरी क़िस्मत कैसी भली है। मैं उस निधि को तीन साल तक छू नहीं सकता। मेरे करघे ठीक रहते, तो मुझे मजदूरी करने की नौबत क्यों आती? मैंने एक हज़ार रुपये कर्ज़ माँगा, किसी ने दिया तक नहीं। इसलिए मज़दूरी न करूँ तो क्या करता?" चन्द्रकांत ने कहा।

"कभी हमने कहा था तो इसका मतलब हमेशा हमारे पास धन नहीं रहता? बताओ, तुमको कितने रुपये चाहिए?" रिश्तेदारों ने पूछा।

"एक हज़ार रुपये काफ़ी हैं।" चन्द्रकांत ने कहा।

चन्द्रकांत के मना करते रहने पर भी ४, ५ रिश्तेदारों ने जबर्दस्ती चार-पाँच सौ करके, कुल दो हज़ार रुपये करघों की मरम्मत के लिए दिये।

उस धन से चन्द्रकांत ने नये करघे खरीदकर भारी पैमाने पर बुनाई का काम शुरू किया। फिर धन की वृष्टि होने लगी। दूसरे साल के पूरे होते ही उसने अपने रिश्तेदारों का कर्ज़ चुका दिया।

तीसरा साल भी पूरा हुआ। हांडी के खोलने का मुहूर्त निश्चित हुआ। रिश्तेदार सब आ धमके। ब्राह्मण ने मंत्र-पठन किया। चन्द्रकांत ने हांडी का ढक्कन तोड़ दिया। उसमें मिट्टी के बर्तन के टुकड़े भरे थे!

दावतें उड़ाते कई सप्ताह वहाँ अड्डा जमाने के ख्याल से जो रिश्तेदार आये, वे मामूली भोजन से संतुष्ट होकर चले गये।

चन्द्रकांत की चाल चल निकली। इस बार वह बहुत सतर्कता के साथ मेहनत करके पुनः बड़ा अमीर बन गया।

पानी की क़ीमत

विजयेंद्र नामक एक छोटा-सा राजा सिरपुर नामक नगर पर राज्य करता था। सिरिपुर के चारों तरफ़ घने जंगल और पहाड़ थे। उस प्रदेश में भील जाति के लोग रहा करते थे।

भील जाति का नायक हर साल विजयेंद्र के पास जंगल से कोई न कोई भेंट भेजा करता था। वह भेंट वैसे कोई बड़ी क़ीमती न होती थी, लेकिन वह भीलों की राजभक्ति का चिह्न होती थी।

हर साल की तरह एक वर्ष भील नायक के यहाँ से सुमंग नामक एक भील एक उपहार ले आया। राजा ने उसे दरबार में प्रवेश देकर उसका आदर किया। सुमंग ने बांस की तीलियों से बनी एक टोकरी में से बांस का बना लोटा, जिसका ढक्कन भी था, निकालकर भक्ति सहित राजा को समर्पित किया।

दरबारी बड़ी उत्सुकता से देख रहे थे कि उसमें आख़िर कौन चीज़ है! राजा ने लोटा लेकर उसका ढक्कन निकाला, उसमें झांककर ठठाकर हँसते उसे औंधे मुँह किया। उसमें से पानी गिरने लगा।

राजा ने सुमंग की ओर देखकर कहा—"तुम्हारे नायक का दिमाग़ ख़राब होता जा रहा है। नहीं तो यह अपमान कैसा? पानी उपहार में भेजता है! मैंने क्या कभी उपहार भेजने को तुम लोगों से कहा था? उसके इंतज़ार में बैठा हूँ! तुम अपने नायक से जाकर कह दो कि ऐसे बे मतलब के उपहार न भेजे।"

सुमंग ने विनयपूर्वक हाथ जोड़कर कहा—"क्षमा कीजिये, महाराज! मेरे नायक ने जो पानी भेजा है, वह मामूली पानी नहीं है। हाल ही में हमें शिवलिंग पर गिरनेवाली एक जलधारा दिखायी

खुर्शीद आलम

पड़ी। वह पानी खुशबूदार और अमृत जैसे है। इसलिए मेरे नायक ने आप की सेवा में भेजा है। आप ने उसे केवल पानी समझकर फेंक दिया, लेकिन कभी कभी उसका मूल्य एक राज्य के मूल्य के बराबर हो सकता है।"

सुमंग की पहली बात पर राजा को संतोष हुआ लेकिन उसके आखिरी वाक्य से गुस्सा आया और गरजते हुए बोला— "उस लोटे-भर पानी से तुम राज्य कमाओ। तुम्हारे साथ मैं अपनी बेटी का विवाह करूँगा। नहीं तो कभी न कभी मैं तुम्हारा सर उड़वा दूँगा।"

सुमंग ने सर झुकाकर नमस्कार किया और वापस जाकर अपने नायक से सारी बातें बतायीं। अपने अनुचर की बात को सच बनाने का भार भील नायक पर आ पड़ा। कुछ दिन गुज़रने के बाद भील नायक ने राजा के पास एक आदमी भेजा। उसने आकर राजा से कहा—"महाराज, जंगल में महादेवगिरि की घाटियों में असंख्य ज़ंगली सुअर हैं, उनका शिकार खेलने के लिए हमारे नायक आपका स्वागत कर रहे हैं।"

विजयेन्द्र बड़े ही उत्साह के साथ भील बस्ती में गया। भील नायक ने राजा के लिए एक बड़ी दावत का इंतजाम किया। उस दावत में सब मधुर पदार्थ ही परोसे गये। दावत के बाद विजयेन्द्र घोड़े पर सवार हो भील नायक तथा तीन अंगरक्षक और अन्य शिकारियों को साथ ले महादेवगिरि की घाटियों की ओर रवाना हुए।

घाटियों में पहुँचने का मार्ग बीहड़ था। पेड़-पौधे व झाड-झंकाड़ों को काटकर रास्ते बनाते जाना पड़ता था। वे जब घाटी में पहुँचे, तब बड़ी देर हो चली थी। इतनी मेहनत उठाकर वहाँ पहुँचने पर उन्हें मेहनत का फल मिला। वहाँ

कई जंगली सुअर थे। उनका शिकार खेलने में राजा निमग्न हो गया। सबसे भारी व बलिष्ठ एक सुअर राजा की दृष्टि में पड़ा। राजा ने उस पर एक तेज़ बाण चलाया, लेकिन वह मरा नहीं, भाग गया। राजा उसका पीछा करते चला गया।

राजा के ओझल होते ही भील नायक ने हाथों से मुँह ढककर एक ऐसी सांकेतिक ध्वनि की जिसका उसे तुरंत जवाब मिला। कुछ ही मिनटों में वहाँ पर सुमंग आ पहुँचा। भील नेता ने उसे राजा के जाने का मार्ग दिखाया। सुमंग उस दिशा में तेज़ी से चला गया। सुमंग के पहुँचने के पहले ही राजा ने सुअर को मार डाला, लेकिन वह प्यास से परेशान था। राजा के मन में यह विचार नहीं आया कि प्यास का कारण भील नायक द्वारा मीठे पदार्थ खिलाना ही है। वह प्यास के मारे शिथिल होने लगा। आँखों के सामने अंधेरा छाने लगा। "प्यास! प्यास!" कहकर चिल्ला रहा था, लेकिन उसके शब्द साफ़ सुनाई नहीं देते थे। एक चट्टान पर लुढ़ककर राजा ऐसा अनुभव करने लगा कि मानों उसके प्राण उड़े जा रहे हैं।

इतने में सुमंग राजा के निकट से होकर ऐसे जाने लगा कि उसने राजा को

देख न लिया हो! उस स्थिति में राजा ने भी सुमंग को नहीं पहचाना। "प्यास लग रही है!" राजा ने सुमंग से कहा।

"मेरे पास लोटा-भर पानी है। वह आपको दे दूँ तो मेरा क्या हाल होगा?" सुमंग ने कहा।

"मरा जा रहा हूँ। पानी दे दो! जो माँगो, सो दूँगा!" राजा ने अपना कंठ पकड़ते कहा। सुमंग ने बांस की टोकरी में से एक बांस का लोटा निकालकर राजा के हाथ थमा दिया। राजा ने सारा पानी गटागट पी लिया। राजा को लगा कि उसकी जान बच गयी। उसने अपने हाथ के लोटे की ओर देखा। उसे लगा कि उसने ऐसा लोटा इसके पूर्व कभी देखा है। सुमंग पर अपनी दृष्टि डाली। उसको तो पहले देखा है!

"तुमने मुझे बचाया। इस भलाई के लिए क्या चाहते हो, माँगो?" राजा ने कहा।

"मुझे और कुछ नहीं चाहिए, राज्य दिलाइये।" सुमंग ने हँसते हुए पूछा।

राजा ने तुरंत उसे पहचान लिया और कहा—"तुम हो?" इसके बाद उससे गले लगाकर पूछा—"तुमने अपनी बात रखी! राज्य चाहते हो? या मेरी लड़की के साथ विवाह करना चाहते हो? या दोनों चाहते हो?"

"महाराज! मुझे कुछ नहीं चाहिए, आप की कृपा चाहिए, बस! वही हमारे लिए सब कुछ है! आप अच्छा शासन करते हैं, इसलिए हम आप के लिए जान देने को तैयार हैं! आप अपनी पुत्री का विवाह किसी राजकुमार के साथ करके हमें खूब पुरस्कार दीजिये।" सुमंग ने कहा।

राजा सुमंग की बातें सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने भील नेता और सुमंग को अपने साथ राजधानी में ले जाकर उन्हें अच्छे अच्छे पुरस्कार दे वापस भेजा।

हत्यारे

बहुत समय पहले एक चीनी अमीर दर्जी रहा करता था। वह विनोद प्रिय था। जब तब वह अपनी पत्नी को साथ लेकर नगर में विनोद देखते सारा दिन घूमा करता था। एक दिन वह दर्जी अपनी पत्नी के साथ सारा नगर घूमकर शाम के होते ही घर लौट रहा था कि उन्हें एक बौना आदमी दिखाई पड़ा। वह बौना तरह तरह के हास्य करके लोगों को हँसा देता था। सबके साथ दर्जी और उसकी औरत भी उसके मसखरेपन पर हँस पड़े। लौटते समय उस रात को अपने अतिथि के रूप में उसका स्वागत किया। बौने ने मान लिया।

बौने को घर पर छोड़ दर्जीवाला बाज़ार गया, भूनी हुयी मछली, रोटियाँ, नींबू, सफ़ेद तिल का हल्वा खरीद लाया। इसके बाद तीनों बैठकर खाने लगे।

बौना खाने में मशगूल था। दर्जी की पत्नी ने मछली का एक टुकड़ा बौने के मुँह में डाल दिया और उसका मुँह बंद करके कहा–"सारा टुकड़ा एक ही दफ़े में निगलना है।" बौने ने बड़ी मुश्किल से उसे निगलने की कोशिश की। बदक़िस्मती से उस टुकड़े में एक बड़ा कांटा था। वह बौने के गले में अटक गया। बौने ने तड़पकर प्राण छोड़ दिये।

यह देख दर्जी को बड़ा डर लगा और बोला–"या अल्लाह! बेचारे इसकी जान हमारे हाथों से गयी; कैसी बदक़िस्मती है।"

"जो हुआ सो हुआ। रोने-धोने से क्या फ़ायदा? अब यह सोचना है कि करना क्या है?" दर्जी की पत्नी ने कहा।

"अब क्या करें?" दर्जी ने पूछा।

"इस पर एक कपड़ा ढककर कंधे पर उठाओ। हम ऐसा अभिनय करेंगे कि हमारा

घनश्याम माहेश्वरी

दर्जी ने वैद्य के घर जाकर दर्वाज़ा खटखटाया। एक नीग्रो औरत ने आकर दर्वाज़ा खोला। दर्जी की पत्नी ने उस नीग्रो औरत के हाथ में एक चाँदी का सिक्का रखा और कहा—"मेरे बच्चे को बुख़ार हो गया है। वैद्य से जाकर कह दो, वे जल्दी आकर देखे। देरी होने से ख़तरा है।"

यह खबर देने नीग्रो औरत दूसरी मंजिल पर गयी। मौक़ा पाते ही दर्जी और उसकी औरत बौने की लाश को सीढ़ियों पर छोड़कर वे दोनों भाग गये।

नीग्रो औरत ने ऊपर जाकर वैद्य के हाथ में चाँदी का सिक्का रखा और उसे बताया कि कोई रोगी को ले आये हैं। वैद्य चाँदी के सिक्के को देख ख़ुशी से नाच उठा। उस ख़ुशी में दिया ले जाने से भी भूल गया और जल्दी जल्दी सीढ़ियाँ पार करने लगा। उस अंधेरे में वैद्य का पैर बौने के शरीर से जा लगा। वह शरीर लुढ़कते-लुढ़कते सीढ़ियों के नीचे आ गिरा। वैद्य ने नीचे आकर देखा, वह शरीर न था, बल्कि शव था।

वैद्य यह सोचकर घबड़ा गया कि उसीने यह हत्या की है। वह सोचने

बच्चा बीमार है, वैद्य की खोज में जा रहे हैं।" पत्नी ने कहा। दर्जी बौने के शरीर पर कपड़ा ढककर उसे उठाये गली में आया। उसकी औरत चिल्लाते रोते जा रही थी—"मेरे बच्चे को शीतला माई हो गयी है! कौन बचायेगा? कोई वैद्य भी है? जो बचा सकेगा!"

शीतला माई की बात सुनते ही राह चलनेवाले सब दर्जी से दूर हट गये। दर्जी की औरत ने उन लोगों से पूछना शुरू किया—"वैद्य का घर कहाँ पर है, भाई?" आख़िर उनमें से एक आदमी ने वैद्य का घर दिखाया।

लगा कि इस लाश को क्या किया जाय! उसने अपनी पत्नी से सारी बातें कहीं।

इस पर वैद्य की पत्नी ने कहा–"इस लाश को घर में रखना खतरनाक है। सुबह तक लाश यहाँ पर रह जायगी तो हम खतरे में पड़ जायेंगे। इसे छत पर ले जाकर पड़ोसवाले के पिछवाड़े में गिरा देंगे। हमारा पड़ोसी सुलतान की रसोई का अधिकारी है। उसके घर में कुत्ते, बिल्लियाँ और चूहों की भीड़ लगी है। वे ही इस लाश को खा जायेंगे। हमारा पिंड भी छूट जायगा।"

वैद्य को यह सलाह पसंद आयी। वे दोनों लाश को उठाकर छत पर ले गये और पड़ोसी के पिछवाड़े में इस तरह उतारा कि वह लाश दीवार से सटकर खड़ी रह गयी। वे यह सोचकर संतोष की सांस लेने लगे कि उनका पिंड छूट गया है।

थोड़ी देर बाद पड़ोसी बाहर से घर लौटा। दिये की रोशनी में उसने देखा कि कोई दीवार से सटकर खड़ा हुआ है।

पड़ोसी के घर में अक्सर खाने-पीने की चीज़ों की चोरी हुआ करती थी। वह यह सोचकर आज तक चुप रहता था कि

कुत्ते या बिल्लियाँ ही उनकी चोरी कर रही हैं। अब उसे संदेह हुआ कि यही आदमी रोज़ चोरी कर रहा है। उसने मन में कहा–"ओह! आज मालूम हुआ कि यही रोज़ मेरे घर चोरी करता है! पड़ोसी घर की छत पर से उतर आया है।" यह सोचकर वह लाठी ले आया और उस आदमी पर लाठी बरसने लगी। वह आदमी गिर गया, फिर भी वह क्रोध में आकर उस लाश को पीटता ही गया।

बड़ी देर तक पीटते रहने पर वह न हिलता-डुलता था और न बोलता ही था। आखिर झुककर देखा तो वह लाश थी।

"अरे बौने, तुमने मेरा घर डुबो दिया। मेरे घर चोरी करके मुझे नुक़सान पहुँचाया। उल्टे मरकर मुझे खतरे में डाल दिया! या अल्लाह! मुझे बचाओ!" वह आदमी लाठी फेंककर पछताने लगा।

वह धीरे से लाश को उठाकर ले गया और बाज़ार में एक दूकान के सामने उसे खड़ा किया। इधर-उधर देखा, कोई न था। तब वह भाग खड़ा हुआ। क़रीब आधी रात हो गयी थी।

थोड़ी देर बाद एक व्यापारी शराब के नशे में लोटते-पोटते उधर आ निकला। बौने को वहाँ पर खड़ा देखा, तो उसने समझा, यह कोई चोर है। वह ज़ोर से चिल्ला उठा–"चोर, चोर है! पकड़ो भागने न जावे!" इसके बाद वह उस बौने पर कूद पड़ा और लगा हाथों से पीटने!

शराबी की चिल्लाहट सुनकर दूकानों के पहरेदार दौड़े आये। उन लोगों ने देखा कि शराबी एक आदमी को पीट रहा है और वह नीचे गिर गया है। फिर क्या था, वह बौना मरा पड़ा था।

"तुमने हत्या की। कोतवाल के पास चलो।" यह कहते पहरेदार उस व्यापारी और लाश को लेकर कोतवाल के पास पहुँचे।

सारा समाचार सुनकर कोतवाल ने अपने भटों को आदेश दिया कि सवेरा होते ही व्यापारी को फाँसी पर लटकाया जाय!

सवेरा होते ही सारे शहर में व्यापारी को फाँसी पर चढ़ाने का समाचार ढ़िंढोरा पिटवाया गया। लोग फाँसी के तख़्ते के पास उमड़ पड़े। व्यापारी को फाँसी के तख़्ते पर खड़ा करके उसके गले में फाँसी का फँदा भी लगाया गया।

इतने में सुलतान की रसोई का अधिकारी वहाँ पर दौड़ा दौड़ा आया और बोला–"ठहरो, ठहरो! उस बौने की हत्या मैंने ही की है!"

"तुमने इसकी हत्या क्यों की?" कोतवाल ने पूछा।

रसोई के अधिकारी ने सारा समाचार कह सुनाया।

"यह आदमी अपने अपराध को स्वीकार करता है। इसलिए उस व्यापारी को छोड़कर इस आदमी को फाँसी पर चढ़ाओ।" कोतवाल ने अपने भटों को आदेश दिया।

इतने में वैद्य वहाँ पर आ पहुँचा और बोला–"असली हत्यारा मैं हूँ।" उसने सारी कहानी सुनायी। कोतवाल ने वैद्य को फाँसी पर चढ़ाने की आज्ञा दी।
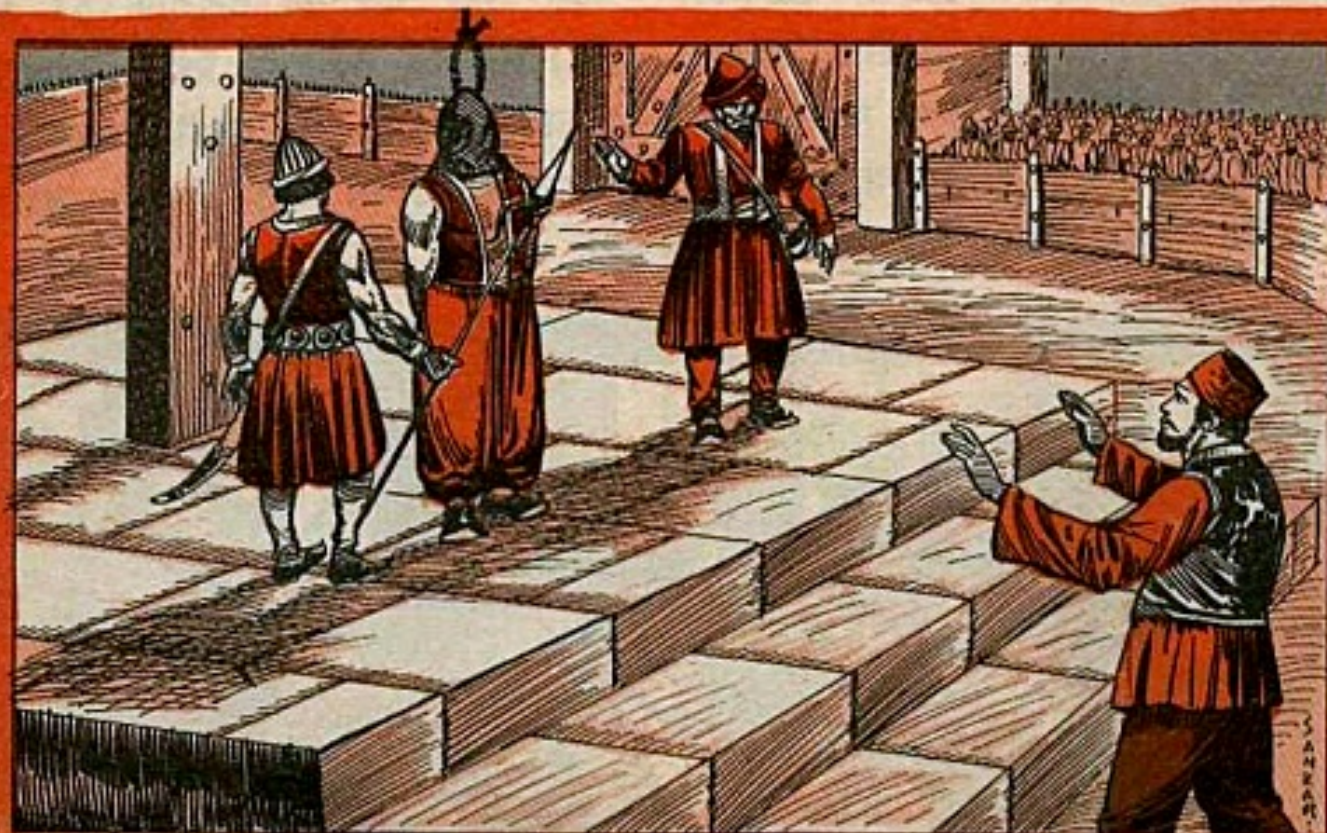
भट वैद्य को फाँसी पर चढ़ाने जा रहे थे कि इतने में दर्जी ने आकर कहा—"मैंने ही पहले इसकी हत्या की है।" इसके बाद उसने कोतवाल को आदि से अंत तक सारी कहानी सुनायी।

"इस बार असली हत्यारा मिल गया है। इसलिए इसीको फाँसी के तख्ते पर चढ़ा दो।" कोतवाल ने कहा।

लेकिन इस बार भी एक अड़चन पैदा हो गयी।

मरा हुआ व्यक्ति असल में सुलतान का विदूषक था। पिछले दिन वह कहीं चला गया, फिर नहीं लौटा। इसलिए आज सुबह होते ही सुलतान ने विदूषक के बारे में दर्याफ़्त किया। इस पर सुलतान को मालूम हुआ कि बौना विदूषक मर गया है और उसकी हत्या का अपराध स्वीकार करते कई आदमी आगे आ रहे हैं। यह खबर मिलते ही सुलतान ने कोतवाल के पास समाचार भेजा कि उन चारों हत्यारों और मरे हुए बौने को उसके दरबार में हाज़िर करे।

सब सुलतान के दरबार में हाज़िर हुए। चारों हत्यारों ने अपनी अपनी कहानी सुलतान को सुनायी। सब की कहानियाँ सुननेवाले एक नाई वैद्य ने बौने की लाश की जाँच की और कहा—"बौने के शरीर में अभी जान है।"

उसने विदूषक का मुँह मुश्किल से खोल दिया और गले में चिमटा डालकर उसमें अटके मछली के एक कांटे को बाहर निकाला। तुरंत बौना ज़ोर से छींक उठा। उठकर खड़े हो वह मुँह पोंछने लगा।

इस तरह सब की तकलीफ़ें दूर हो गयीं। सुलतान ने नाई वैद्य को बहुत बड़ा इनाम दिया और बाक़ी हत्यारे भी सुलतान से उचित इनाम पाकर खुशी-खुशी घर चले गये।

चोरों के बीच चोर

भोजपुर का राजा रणधीर सिंह बड़ा दयालु था। उसका राज्य समस्त प्रकार के वैभवों से पूर्ण था। राज्य-शासन बड़े ही व्यवस्थित ढंग से चलता था। राजधानी के चारों तरफ़ कोशागार थे। उनमें जनता के लिए आवश्यक समस्त पदार्थ भरे रहते थे।

पर अचानक भोजपुर में चोर-लुटेरों का बोलबाला होने लगा। सशस्त्र लुटेरे आडोस-पड़ोस के गाँवों पर हमला करके लूट-खसोट करने लगे। वे कब किस गाँव पर चढ़ बैठते, इसका पता राजा को पहले न लगता था, इसलिए राज-भटों को उन्हें भगाने के लिए भेजना संभव न था।

भोजपुर के पूरब में घने जंगल थे। उन से भी आगे बड़े-बड़े पहाड़ थे। क्रमशः मालूम होने लगा कि लुटेरे उन पहाड़ों की गुफ़ाओं में रहते हैं और जंगल से होकर गाँवों पर चढ़ाई कर बैठते हैं।

राजा ने घोषणा की कि जो चोरों को पकड़ा देगा, उसे जागीरें दी जायेंगी। कुछ हिम्मतवरों ने चोरों का पता लगाने जंगल में प्रवेश किया, पर उनमें से कोई भी जान से न लौटा। इस बात का पता न चला कि जंगल के हिंस्र पशुओं ने उन्हें मार डाला या चोरों के हाथों में वे मारे गये।

एक दिन रात को चोरों का दल जंगल से होते हुये गाँवों की ओर जा रहा था, तब वृक्षों के बीच उस दल को एक विचित्र दृश्य दिखायी दिया। एक युवती कई राज-भटों के साथ अकेले लड़ते प्राण-रक्षा कर रही है। चोरों को देखते ही वे राजभट भाग खड़े हुए।

चोरों ने उस युवती के निकट पहुँच कर पूछा—"बहन, तुम कौन हो? वे राज-भट तुमको मार डालने का क्यों यत्न करते हैं?

चन्द्रशेखर वर्मा

मेरी बड़ी बहन–दो ही संतान थीं। मेरी बहन बड़ी सुंदर थी। मैंने भी अपने पिता के पास शिक्षण पाया है, लेकिन मेरी बहन को तलवार चलाना, घोड़े पर सवारी करना आदि बिलकुल पसंद न थे। वह हमेशा अपने को अलंकृत कर अप्सरा की तरह रहती थी। राजा की आँख उस पर पड़ी। एक दिन उसने एक दासी को भेज कर उस से यह कहलवाया कि रानी बुला रही है। इस तरह धोखे से अंत:पुर बुलवाया और वहीं बन्दी बनाया। अगर उसके स्थान पर मैं होती तो जितने लोगों को मार सकती, मारकर स्वयं मर जाती, किंतु राजा के वश में न जाती। राजा के इस काम पर नाराज़ हो मेरे पिता ने उससे दुश्मनी मोल ली।

राजा ने उस पर देश-द्रोह का इल्ज़ाम लगाकर उन्हें और मुझे देश निकाला दण्ड दिया। हमें देश छोड़ने के लिए कुछ मीयाद दी गयी, लेकिन उस अवधि के पूरा होने के पहले ही राजा ने गुप्त रूप से मेरे पिता को मरवा डाला। मैं बच गयी। मैंने यह शपथ ली है कि राजा की हत्या कर के ही मैं मरूँगी। मगर मेरे वास्ते राजभट इस तरह पीछे पड़े थे। मेरी

हमारे द्वारा किसी प्रकार की मदद चाहो तो कहो, हम ज़रूर करेंगे।"

"आप लोग अच्छे मौक़े पर आये, वरना मैं उनके हाथों में मर गयी होती। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं कैसे आप लोगों का ऋण चुका सकूँगी"! युवती ने कहा।

"हम लुटेरे हैं। लेकिन तुम कौन हो?" चोरों ने फिर उस युवती से पूछा।

"अगर आप लोग लुटेरे हैं तो हम सब राजा के दुश्मन हैं। मेरा नाम दुर्गाबाई है। मेरे पिता राजा के यहाँ नौकरी करता था और राजभटों को सैनिक-शिक्षण दिया करता था। उनके मैं और

समझ में नहीं आता कि मेरी शपथ की पूर्ति कैसे होगी ।" युवती ने कहा ।

चोरों के मन में उस युवती के प्रति दया और सहानुभूति पैदा हुई ।

"हम राजभटों से तुम्हारी रक्षा कर सकते हैं । मगर राजा से बदला लेने में हम तुम्हारी मदद नहीं कर सकेंगे ।" चोरों ने दुर्गाबाई से कहा ।

"बस, यही मदद कीजिये । इसके बदले में मैं आप लोगों की एक मदद कर सकती हूँ । राजा के चारों कोशागारों के गुप्त मार्गों को मैं आप को दिखा सकती हूँ । आप उनको लूट लीजिये । राजा का अंत करने का मौक़ा मुझे ज़रूर मिल जायगा ।" दुर्गाबाई ने कहा ।

"तब तो अभी चलेंगे । कोशागार का रास्ता दिखाओ ।" चोरों ने पूछा ।

दुर्गाबाई ने उनको एक गुप्त मार्ग द्वारा पूरब के कोशागार में पहुँचा दिया । लुटेरों ने उसे लूट लिया और दुर्गाबाई को अपने गुप्त प्रदेश में ले गये । दूसरे दिन रात तक वह उन चोरों के साथ रही और उन सबका परिचय भी प्राप्त किया । अंधेरे के फैलते ही उन्हें दक्षिण के कोशागार के पास ले गयी । पूरब के कोशागार के पास जैसे एक मोर की मूर्ति थी, वैसी ही यहाँ पर भी थी । उसको घुमाने से दर्वाजा खुल जाता है । दुर्गाबाई ने दर्वाजा खोल दिया, चोर सब अन्दर चले गये ; तब मोर को घुमा कर उसने दर्वाजा बंद किया और अपने रास्ते चली गयी ।

चोरों ने समझ लिया कि वे कोशागार में नहीं, बल्कि बंदी गृह में पहुँच गये हैं । दुर्गाबाई को चिल्ला-चिल्ला कर पुकारा, गालियाँ दीं, लेकिन कोई फ़ायदा न रहा ।

इसके बाद राजा के दरबार में चोरों को उपस्थित किया गया । उस वक़्त राजा की बगल में दुर्गाबाई बैठी थी । चोरों को तब पता चला कि दुर्गाबाई राजकुमारी है ।
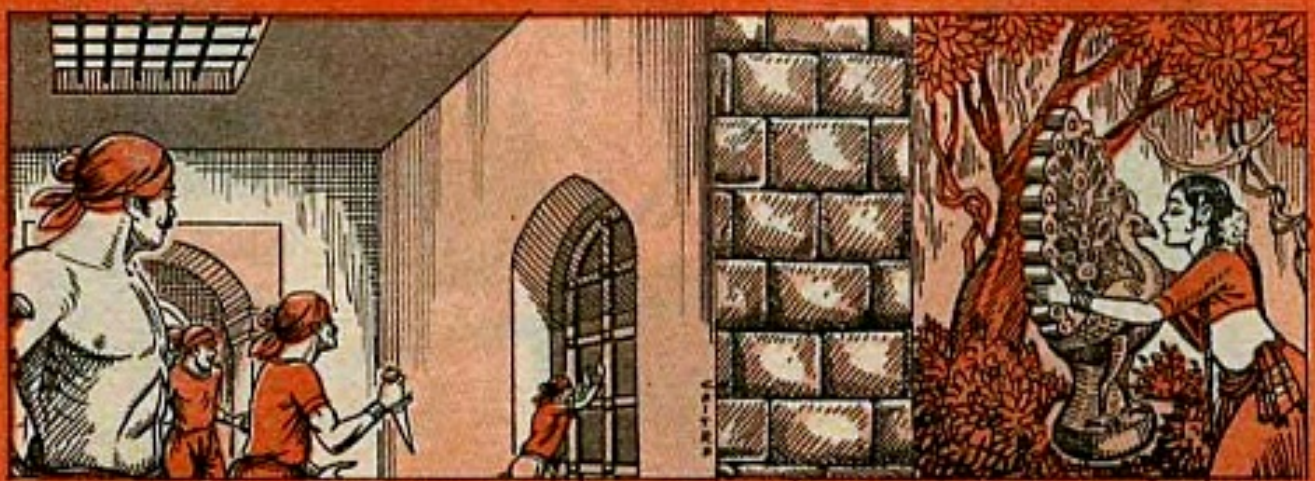
महादाता

एक गाँव मे एक अमीर था। वह गरीबों को कभी कोई दान देता न था। कंजूस क रूप में वह मशहूर हुआ।

एक बार एक आदमी ने अमीर के घर आकर दान माँगा।

"तुम्हारा गाँव कौन-सा है?" अमीर ने उससे पूछा।

"यही मेरा गाँव है।" उस आदमी ने जवाब दिया।

"नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता! इस गाँव के सब लोग जानते हैं कि मैं दान नहीं देता।" अमीर ने कहा।

उसी गाँव में एक चमार था। जो कोई भी जाकर उससे कुछ माँगता तो वह जरूर कुछ न कुछ दे देता। वह महादाता माना जाता था।

कुछ दिन बाद वह अमीर मर गया। गाँववालों ने उसकी लाश को सड़क के किनारे गाड़ दिया। उसकी मौत पर किसी ने आँसू नहीं गिराये।

चमार के पास बराबर भिखमंगे जाते रहें। लेकिन उसने अब यह कहना शुरू किया—"मेरे पास देने को क्या धरा है?"

गाँव के मुखिये ने उस चमार को अपने पास बुला भेजा और पूछा—"तुम महादाता कहलाते हो, लेकिन हमने सुना कि अचानक तुमने दान देना बंद कर दिया है, क्या बात है?"

"दान करने के लिए मरे हुए अमीर ही मुझे अपार धन दिया करते थे। उन्होंने मुझसे यह क़सम करायी थी कि मैं किसीसे यह न कहूँ कि यह सारा धन उनका है! अब वे मर गये हैं। मैं गरीब हूँ, देने को मेरे पास है ही क्या?" चमार ने जवाब दिया।

अक़्लमंद लड़की

पुराने जमाने में कांचीपुर में कांचनगुप्त नामक एक धनी व्यापारी रहता था। वह व्यापार करने में दक्ष तो था ही, साथ ही उत्तम चरित्रवाला और विश्वसनीय व्यक्ति भी माना जाता था। लोग उसका बड़ा आदर करते थे।

उसके आनंद नामक एक पुत्र था। आनंद भी अच्छे स्वभाव का और शांत-प्रकृति का था। लेकिन उसमें व्यापार करने की दक्षता न थी। भोला था। यथार्थ को पसंद करता था। सब की बातों पर यक़ीन करता था।

आनंद तो बड़ा हो गया, लेकिन व्यापारिक सूझ-बूझ का ज्ञान उसे प्राप्त नहीं हुआ। उसे व्यापार में भी दक्ष बनाने की उसके पिता ने बड़ी कोशिश की, लेकिन कोई फ़ायदा न रहा। व्यापार करना तलवार की धार पर चलने के समान है। ग्राहकों का विश्वास भी बनाये रखना है, नुक़सान से बचना है। धन भी मिले और अच्छा नाम भी कमावे, ऐसी सामर्थ्य आनंद को प्राप्त न हुई।

इसलिए कांचनगुप्त हमेशा दुखी रहने लगा। उसके वही एक मात्र पुत्र है। अगर उसे व्यापार करना ठीक से नहीं आता तो उसके बाद उस बड़े व्यापार को देखनेवाला ही कौन है? इस समस्या को हल करना है तो एक ही उपाय है। आनंद का विवाह एक होशियार लड़की के साथ करना है। यह ज़रूरी नहीं है कि लड़की अमीर घर की हो, और ख़ूबसूरत हो। पर अच्छी अक़्लमंद हो और व्यापार के रहस्यों को समझनेवाली हो, यह ज़रूरी है।

ऐसी युवती के वास्ते कांचनगुप्त ने सब जगह दर्याफ़्त करना शुरू किया।

दीनदयाल

वह व्यापार के निमित्त जहाँ भी जाता, अपनी योग्य बहू को ही ढूंढ़ता। अपने दोस्तों से भी कह रखा था कि कहीं होशियार लड़की दिखाई दे तो उसे सूचित कर दे। पर धन और सौंदर्य की तरह देखते ही अक़्लमंदी का पता नहीं चलता। इसलिए उसका अन्वेषण बहुत दिनों तक सफल न हुआ।

एक बार वह वर्द्धमानपुर के हाट में गया। उस हाट में कांचनगुप्त घूम ही रहा था कि एक तेल की दूकान के पास चावल की गठरी लेकर एक आदमी आया और बोला—"बढ़िया चावल है। चावल के बराबर तेल कौन देगा?"

"बढ़िया सौदा है! चावल से तेल पाँच-छे गुने ज़्यादा दाम है। चावल के बराबर तेल देने के लिए हम तेल मुफ़्त में बांटने थोड़े ही बैठे हैं!" तेल के दूकानदार उसे डाँट रहे थे।

उस समय एक दूकान पर बैठी सोलह साल की लड़की बोली—"देखो, भाई! यहाँ आओ। मैं जिस माप का बर्तन दूंगी, उसे भरकर तुम चावल दोगे तो मैं उसे भरकर तेल दूँगी!"

चावलवाले ने मान लिया। कांचनगुप्त और कुछ लोग वहीं पर खड़े इस विचित्र को देखने लगे।

वह लड़की एक बड़ी थाली ले आयी, जिसका किनारा बहुत ही छोटा था, बोली—"इसमें चावल भर दो।"

एक गठरी का चावल दो बार में थाली भर गयी। इसके बाद उस लड़की ने उस थाली के किनारों तक दो बार तेल भरकर चावलवाले को दिया। लाचार हो चावल वाला वह तेल लेकर चला गया।

फ़ायदे का सौदा करनेवाली उस लड़की के घर का पता लगाकर कांचनगुप्त ने आखिर अपने पुत्र के साथ उसकी शादी की।
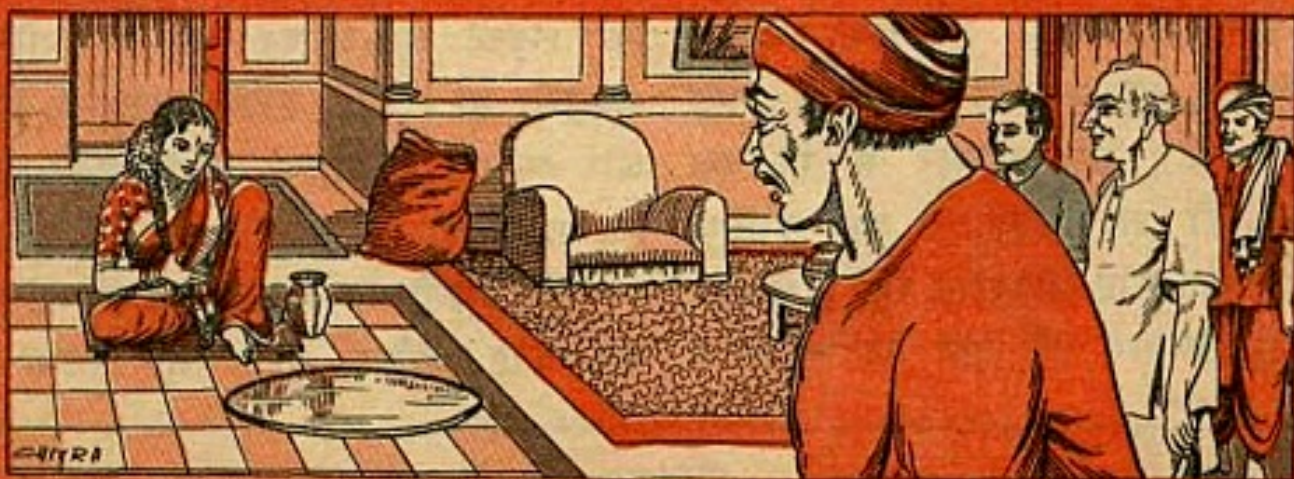
भूतों की दोस्ती!

एक गाँव में रामप्रसाद नामक एक किसान था। उसके तीन बेटे थे। उनमें सब से छोटा लड़का श्यामदास बेवकूफ़ था। वह हमेशा भूतों को देखने और उनसे दोस्ती करने की इच्छा रखता था।

रामप्रसाद एक दिन हठात् बीमार पड़ गया। उसे मालूम हुआ कि उसकी मौत निकट आ गयी है, इसलिए उसने अपने बेटों को बुलाकर समझाया—"मेरे मरने के बाद श्यामदास जो भी मांगे, उसे देकर बाक़ी जायदाद तुम लोग आपस में बांट लो।" इसके बाद श्यामदास को बुलाकर कहा—"बेटा, तुम्हें ज़रा भी लौकिक ज्ञान नहीं है। तुम जो भी मांगो, वही तुमको भाई दे देंगे। उसे ले लो और लोगों पर दया का भाव रखो।"

"पिताजी! भूत कहाँ रहते हैं?" श्यामदास ने पूछा।

"उजड़े हुए घरों में रहते हैं, बेटा!" रामप्रसाद ने अपने छोटे लड़के के भोलेपन पर पछताते हुए जवाब दिया।

रामप्रसाद के मरने के बाद श्याम से उसके भाइयों ने पूछा—"पिताजी की जायदाद में से तुम क्या चाहते हो?"

"मुझे भूतों से दोस्ती करने की इच्छा है। उन्हें जो पसंद है, वही मुझे दीजिये!" श्यामदास ने कहा।

बड़े भाई श्यामदास की इस बात पर बहुत खुश हुए और आपस में चर्चा करके उसे मिर्च के चूर्ण की एक गठरी देकर बोले—"भूतों की आँखों में यह चूर्ण फेंक दोगे तो वे तुमसे दोस्ती करेंगे।"

श्यामदास मिर्च के चूर्ण की गठरी लेकर जंगल के रास्ते निकला। चलते-चलते उसे एक उजड़ा हुआ घर और उसमें रोशनी दिखायी पड़ी। वह उस घर के निकट

विमला माथुर

पहुँचा तो कुछ लोगों की बातें और एक औरत के रोने की आवाज़ सुनाई पड़ी ।

श्याम ने सोचा कि उस घर में भूत होंगे । यह सोचकर घर के सामने पहुँचा और दर्वाज़ा खटखटाया–"दोस्तो, मैं तुम लोगों से दोस्ती करने आया हूँ । दर्वाज़ा खोल दो तो!" श्यामदास जोर से चिल्ला उठा ।

भीतर की बातें बंद हुईं । कुछ लुटेरे पड़ोसी गाँव के एक सेठ का घर लूटकर, सेठ की लड़की को उठा लाये थे और उसे बाँधकर सारा धन बाँट रहे थे ।

एक चोर ने आकर दर्वाज़ा खोल दिया । चोरों को और खूँटे से बँधी युवती को भी उसने भूत समझा ।

"लो, यह तुम लोगों के वास्ते ले आया हूँ ।" यह कहते श्यामदास ने मिर्च की गठरी खोल दी । चोरों ने श्यामदास को चारों तरफ़ से घेर लिया । श्यामदास ने तुरंत उन सब की आँखों में मिर्च का चूर्ण फेंका । चोरों की आँखें जलने लगीं ।

"जल्दी मेरे बंधन ख़ोल दो!" सेठ की पुत्री गुणवती ने कहा ।

पिता ने श्यामदास से प्राणियों पर दया दिखाने को कहा था । यह सोचकर उसने उस युवती के बंधन खोल दिये । गुणवती श्यामदास को बाहर ले आयी और बाहर से दर्वाज़े पर कुंड़ी चढ़ायी । सवेरे होने तक वे दोनों गुणवती के पिता के गाँव पहुँचे । सारा समाचार जानकर सेठ भटों को साथ लेकर जंगल के उस उजड़े घर के पास पहुँचा । सभी चोर रंगे हाथ पकड़े गये ।

अपनी भलाई करनेवाले श्यामदास के प्रति सेठ के मन में स्नेह पैदा हुआ । उसने समझा कि गुणवती भी श्याम से प्रेम करती है, इस पर सेठ ने बड़ी धूम धाम से गुणवती और श्यामदास का विवाह किया और श्याम को अपने घर रख लिया ।

युवराज कौन है?

एक राजा के पहली संतान में ही जुड़वें बच्चे हुए। दोनों लड़के थे। देखने में दोनों एक ही तरह के लगते थे। लेकिन एक गोरा था और दूसरा थोड़ा सांवला था। इसलिए राजा ने एक का नाम अरुण कुमार रखा और दूसरे का करुण कुमार।

ज्यों ज्यों दोनों बढ़ते गये, त्यों त्यों वे दोनों पढ़ने-लिखने, भाला चलाने व घुड़ सवारी में बराबर प्रवीणता दिखाने लगे। दोनों आपस में बड़ा स्नेह रखते थे। सदा साथ रहते थे।

उनको देखने पर राजा के मन में यह संदेह पैदा होता था कि उनमें युवराज किसको बनाया जायँ? सोचते सोचते वह एक निर्णय पर पहुँचा। एक दिन राजा ने दोनों कुमारों को अपने पास बुलाया और कहा—"तुम दोनों अलग-अलग शहर में जाकर सौ-सौ रुपये शाम के अन्दर ले आओ।"

दोनों राजकुमार अलग-अलग रास्ते से शहर में चले गये।

"आख़िर सौ रुपये ही तो हैं! किसी से भी पूछूं, दे देंगे।" अरुण ने सोचा। उसने एक मित्र के पास जाकर एक सौ रुपये माँगा।

"मेरे पास सौ रुपये नहीं हैं, साठ रुपये हैं।" मित्र ने कहा।

"नहीं, साठ रुपये से काम नहीं चलेगा।" यह कहकर अरुण ने उन रुपयों को लेने से इनकार किया और वह दूसरे मित्र के पास गया। उसके पास साठ रुपये भी नहीं थे। अरुण ने कई मित्रों से पूछा। किसी के पास सौ रुपये न थे, सबने बीस, दस, पाँच, दो रुपये देने की बात कहीं, पर कोई भी एक सांथ सौ रुपये दे न पाया। अरुण ने गुस्से में आकर कुछ लोगों को गालियाँ दीं। उसे

परेश शर्मा

लगा कि उसके मित्रों ने उसका अपमान किया है।

अरुण ने सोचा था कि घड़ी भर में सौ रुपये मिल जायेंगे, पर शाम तक कोशिश करने पर भी उसे सौ रुपये नहीं मिले।

तब अरुण को एक उपाय सूझा। उसने सीधे कोशाधिकारी के पास जाकर सौ रुपये माँगा।

"मेरे पास दस ही रुपये हैं।" कोशाध्यक्ष ने कहा।

"तुम अपने रुपये मत दो। खजाने के रुपये दो।" अरुण ने कहा।

"राजा की मुहर के बिना मैं खज़ाने से राजा को भी एक पैसा नहीं दे सकता।" कोशाध्यक्ष ने कहा।

अरुण निराश हो उठा।

शाम हो गयी। राजा ने अपने पुत्रों को बुलाकर पूछा–"रुपये ले आये?"

अरुण सौ रुपये न ला सका था। उसने सारी कहानी राजा को सुनायी।

करुणकुमार ने सौ रुपये राजा के हाथ में दिये।

"तुम ये रुपये कैसे लाये हो?" राजा ने पूछा।

"मैंने अपने दोस्तों के पास जाकर पूछा–मुझे कुछ रुपयों की ज़रूरत है, जितने रुपये दे सकते हो, दो। कुछ ने दस रुपये दिये, कुछ ने पाँच, दो और यहाँ तक कि एक एक रुपया भी दिया। सौ रुपयों के पूरे होते ही मैं आपके पास चला आया।

राजा ने निश्चय किया कि करुणकुमार ने अपना रोब दिखाये बिना, दूसरों को कष्ट दिये बिना, अपना काम पूरा कर लिया है। इसलिए उसे ही गद्दी देनी चाहिए। यह सोचकर करुणकुमार को युवराज बनाया।

एक दिन प्रातःकाल कृष्ण सात्यकी और उद्धव को साथ ले सभाभवन में जा रहे थे कि इतने में उनके दर्शन करने कोई आ पहुँचा। द्वारपालकों के साथ आये हुए उस व्यक्ति ने कहा–"भगवान, मगध देश में शासन करनेवाले जरासंध ने बीस हज़ार राजाओं को जीत लिया और उन्हें क़ैद करके तरह तरह की यातनायें दे रहा है। उन सबने आपकी शरण में आने के लिए मुझे प्रतिनिधि बनाकर भेज दिया है। वास्तव में हम सब आपकी प्रजा हैं। इसलिए हमारी रक्षा का भार आप पर है।"

इसी समय में अचानक नारद वहाँ आ पहुँचा। कृष्ण ने नारद का उचित आदर-सत्कार किया। इसके बाद कुशल समाचार पूछा। तब नारद ने यों कहा–"पांडवों में ज्येष्ठ युधिष्ठिर ने राज्य का संपादन करने के ख्याल से राजसूय-यज्ञ करने का निश्चय किया है। इसका आधिपत्य आप ही को वहन करना होगा। सभी राजा आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

एक ओर जरासंध द्वारा बंदी हुए राजाओं ने कृष्ण की सहायता माँगते दूत भेजा है। उसी समय युधिष्ठिर द्वारा किये जानेवाले राजसूय-यज्ञ का आधिपत्य वहन करने का नारद के द्वारा बुलावा आया है।

"हमें इन दोनों में से किसको प्रथम कर्तव्य के रूप में लेना है। हमें दोनों को

संतुष्ट करना जरूरी है।" कृष्ण ने उद्धव से सलाह माँगी।

"जरासंध को मारने के लिए किसी दूसरे कार्य का प्रबंध कर उसी कार्य पर जाने की ज़रूरत न होगी। क्योंकि युधिष्ठिर द्वारा राजसूययज्ञ करते वक़्त किसी भी दशा में अनेक राजाओं को हराना पड़ेगा। उसी समय जरासंध का मामला भी ठीक किया जा सकता है। इसलिए पहले राजसूय-यज्ञ में जाना ही उचित होगा।" उद्धव ने सलाह दी।

इस संदर्भ में उद्धव ने एक बात और याद दिलायी। जरासंध पर सेना सहित हमला करके उसे पराजित करना संभव नहीं। उसकी ताक़त की समता रखनेवाला केवल भीम ही है। अतः भीम को ही द्वन्द्वयुद्ध में जरासंध को पराजित करना होगा। इसके अलावा और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

उद्धव की सलाह श्रीकृष्ण को पसंद आयी। उन्होंने बलराम की अनुमति पाकर महिलाओं समेत इंद्रप्रस्थ के लिए रवाना होने के लिए दारुक इत्यादि को आदेश दिया। कृष्ण चतुरंगी सेना के साथ पालकियों में रुक्मिणी, सत्यभामा इत्यादि नारीमणियों को साथ ले बड़ी शान से रवाना हुए। रवाना होने के पहले नारद को विदा करके दूत से कृष्ण ने कहा–"तुम अपने राजाओं को मेरी तरफ़ से समझाओ कि उनके डरने की कोई बात नहीं है। मैं अवश्य जरासंध का वध करके उन्हें मुक्त करूँगा।" ये बातें कहकर उसे भी विदा किया।

कृष्ण के आगमन का समाचार जानकर युधिष्ठिर अगवानी करने आये और आनंद-बाष्पों के साथ उनका आलिंगन किया।

कृष्ण ने पांडवों का उचित रूप में परामर्श किया और तदुपरांत तोरण, झंडे

व केले के पेड़ों से अलंकृत राजपथों से होकर इंद्रप्रस्थ में प्रवेश किया। कृष्ण के दर्शन करने के लिए नगरवासी राजपथों व भवनों पर जमा हुए।

युधिष्ठिर के भवन में कृष्ण ने कुंती तथा उनकी बहुओं को देखा।

कृष्ण पांडवों के अत्यंत आप्त व्यक्ति हैं। कृष्ण और अर्जुन की मैत्री अपूर्व है। अर्जुन ने जिस वक़्त खांडव का दहन किया, उस समय कृष्ण ने स्वयं उसका सारथ्य किया। उसे अति दिव्य रथ, घोड़े, अक्षय तूणीर वग़ैरह दिलाये; मय द्वारा मय-सभा का निर्माण करवाया। इसलिए युधिष्ठिर ने बहुत समय तक कृष्ण को सपरिवार अपने पास रखा, और आखिर एक दिन भरी सभा में राजसूय-यज्ञ के बारे में कृष्ण से परामर्श किया।

कृष्ण ने युधिष्ठिर का अभिनंदन करते कहा–"आप के द्वारा राजसूय-यज्ञ करने में कोई आपत्ति नहीं है। दिग्विजय करने के लिए दिकपाल जैसे आपके चार वीर भाई हैं। वे चारों दिशाएँ जीतकर आपको दे सकते हैं।"

यह बात सुनकर युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न हुए और अपने चारों भाइयों को चार दिशाओं को जीत लाने भेज दिया। सहदेव दक्षिण की ओर, नकुल पश्चिम, अर्जुन उत्तरी दिशा में तथा भीम पूरब की ओर गये। उन दिशाओं के राजाओं को जीतकर राजसूय-यज्ञ के निमित्त अपार धन ले आये और युधिष्ठिर के हाथ सौंप दिये।

सभी राजा तो हार गये, लेकिन जरासंध हारा न था। यह युधिष्ठिर के लिए चिंता का कारण था। यह देखकर कृष्ण बोले–"जरासंध को हराने के संबंध में आप चिंता न कीजिये। उसको हराने का उपाय उद्धव ने पहले ही बता दिया है। वह काम मैं देख लूंगा।"

इसके बाद कृष्ण भीम और अर्जुन को साथ ले जरासंध की राजधानी गिरिव्रजपुर में गये। वहाँ पर तीनों ने ब्राह्मण-वेश धारण किया। जरासंध रोज़ ब्राह्मण-पूजा करता है। जब वह इस कार्य में निमग्न था तब वे उसके पास जाकर बोले—"हम दूर देश से आये हुए अतिथि हैं। हमारी इच्छा की वस्तु दो।"

जरासंध ने उनको ध्यान से देखा। उन तीनों की आकृतियाँ और स्वर परिचित से मालूम पड़ें। उनके हाथ ऐसे प्रतीत होते थे, मानों धनुष और बाणों के प्रयोग करनेवाले राजाओं के हाथों जैसे थे। वे निस्संदेह ब्राह्मण-वेषधारी क्षत्रिय ही हैं।

फिर भी जरासंध ने उनकी इच्छा की पूर्ति करने का निश्चय किया और पूछा—"आपको क्या चाहिए?"

"हमें तुम्हारे साथ द्वन्द्वयुद्ध ही चाहिए, बस और कुछ नहीं। ये भीम हैं, ये उनके भाई अर्जुन हैं। मैं तुम्हारा शत्रु कृष्ण हूँ।" कृष्ण ने कहा।

ये बातें सुनकर जरासंध लापरवाही से हँस पड़ा और बोला—"ऐसी बात हो तो मैं द्वन्द्वयुद्ध करूँगा। लेकिन तुम्हारे साथ नहीं, क्योंकि तुम मुझे देख मथुरा से भागकर समुद्र में सर छिपानेवाले कायर हो! अर्जुन से भी युद्ध नहीं करूँगा, क्योंकि यह मुझसे छोटा है, अलावा इसके ताक़त में वह मेरी बराबरी नहीं कर सकता। भीम ही मेरी बराबरी कर सकते हैं। उनसे मैं द्वन्द्वयुद्ध करूँगा।"

जरासंध ने एक भारी गदा भीम के हाथ दी और ऐसी ही एक दूसरी गदा उसने ली। कृष्ण और अर्जुन समेत वे दोनों नगर के बाहर युद्धभूमि में गये। वहाँ पर भीम और जरासंध ने गदा-युद्ध
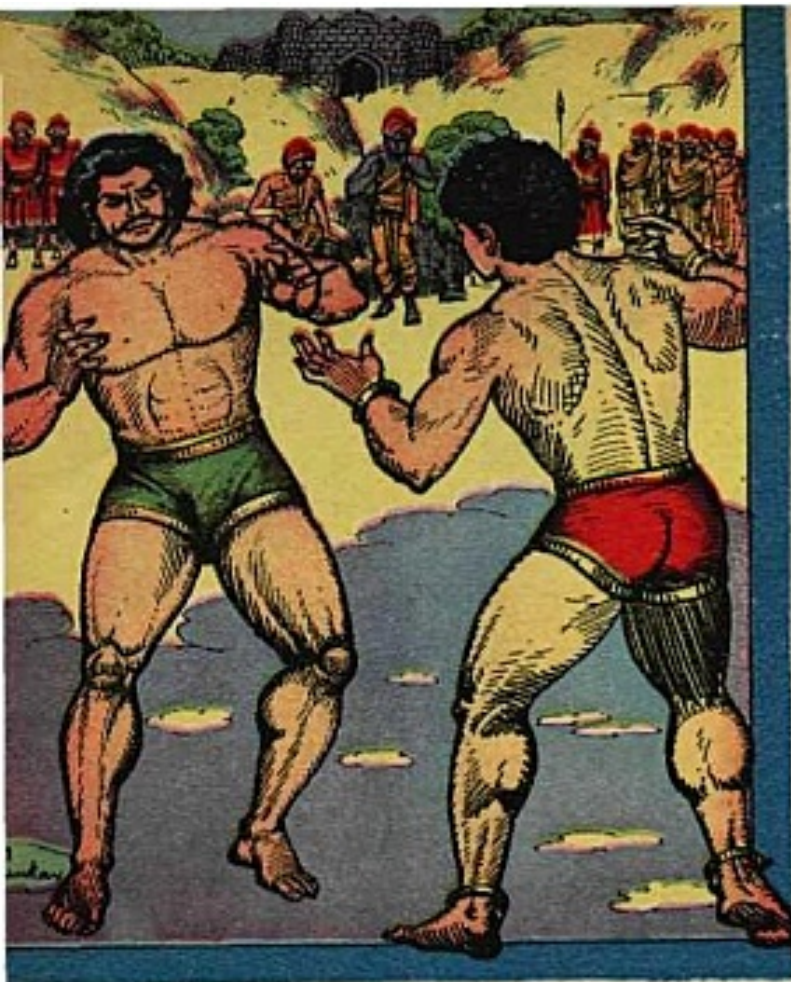
का प्रारंभ किया। एक दूसरे के प्रहार से बचते, मौक़ा मिलने पर परस्पर गदाओं का आघात करते वे दोनों मत्त हाथियों की भांति लड़ने लगे। आखिर दोनों की गदाएँ टूट गयीं, तब उन्होंने मुष्ठि-युद्ध प्रारंभ किया।

जरासंध जन्म के समय ही दो टुकड़ों में पैदा हुआ था। जर नामक पिशाच ने उन दो खण्डों को जोड़ दिया था। इसलिए उसका नाम जरासंध पड़ा। यह बात कृष्ण जानते थे। उसे मारने के लिए दो टुकड़ों में चीरना ही एक मात्र उपाय है, यह बात भीम को समझाने के लिए कृष्ण ने एक तिनका लेकर उसे दो खण्डों में चीर डाला। यह संकेत भीम की समझ में आया। भीम ने जरासंध को नीचे गिराया, उसके एक पैर को अपने पैर से दबा रखा और दूसरा पैर पकड़कर जरासंध को सीधे चीर डाला।

युद्ध को देखने आये हुए लोग दो टुकड़े हुए जरासंध को देख हाहाकार करने और शोरगुल मचाने लगे।

कृष्ण और अर्जुन ने भीम के साथ आलिंगन कर उनका अभिनंदन किया।

जरासंध के मरते ही कृष्ण ने जरासंध के पुत्र सहदेव को मगध राज्य की गद्दी पर अभिषिक्त किया और जरासंध द्वारा बन्दी हुए सभी राजाओं को मुक्त किया। कृष्ण का आदेश पाकर सहदेव ने उन सब राजाओं के स्नान-पान का प्रबंध किया, उत्तम उपहारों के साथ उनका सत्कार करके उनके देशों में भेज दिया।

कृष्ण भीम और अर्जुन समेत इंद्रप्रस्थ को लौट आये और युधिष्ठिर को जरासंध की मृत्यु का समाचार सुनाया। अपनी इच्छा की पूर्ति होने के कारण अनेक प्रकार से युधिष्ठिर ने कृष्ण का स्त्रोत्र किया और अपनी प्रसन्नता प्रकट की।

इसके बाद युधिष्ठिर ने राजसूय-याग का प्रारंभ किया। उसके ऋत्विक कृष्ण द्वैपायन, भरद्वाज, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम इत्यादि अनेक थे।

इस याग में युधिष्ठिर ने भीष्म, धृतराष्ट्र, उनके पुत्रों को, द्रोण, कृप, विदुर इत्यादि सब को बुला भेजा। असंख्य राजा तथा चतुर्विध वर्णों के लोग भी उपस्थित थे।

सोने के हलों से यज्ञ-भूमि जुतवाकर वेदिका इत्यादि का प्रबंध करके ऋत्विकों ने युधिष्ठिर से यज्ञ-दीक्षा धरायी। राजसूय-यज्ञ बड़े वैभव के साथ संपन्न हुआ। यज्ञकर्ता के द्वारों सदस्यों इत्यादि के सत्कार का दिन आया। उस दिन युधिष्ठिर ने सदस्यों को संबोधित कर पूछा—"आप ही लोग इसका निर्णय कीजिये कि आप में से कौन प्रथम पूजा पाने योग्य हैं?"

इस प्रश्न का कोई उत्तर न दे सके। क्यों कि उस सभा में अनेक महानुभाव थे। सब मौन थे। उस वक्त सहदेव ने सभा को संबोधित कर कहा—"इस बात पर सोच-विचार करने को ही क्या है? भगवान श्रीकृष्ण ही प्रथम पूजा के योग्य हैं। उनकी पूजा करने का अर्थ है—समस्त भूतगणों की पूजा करने के समान है।"
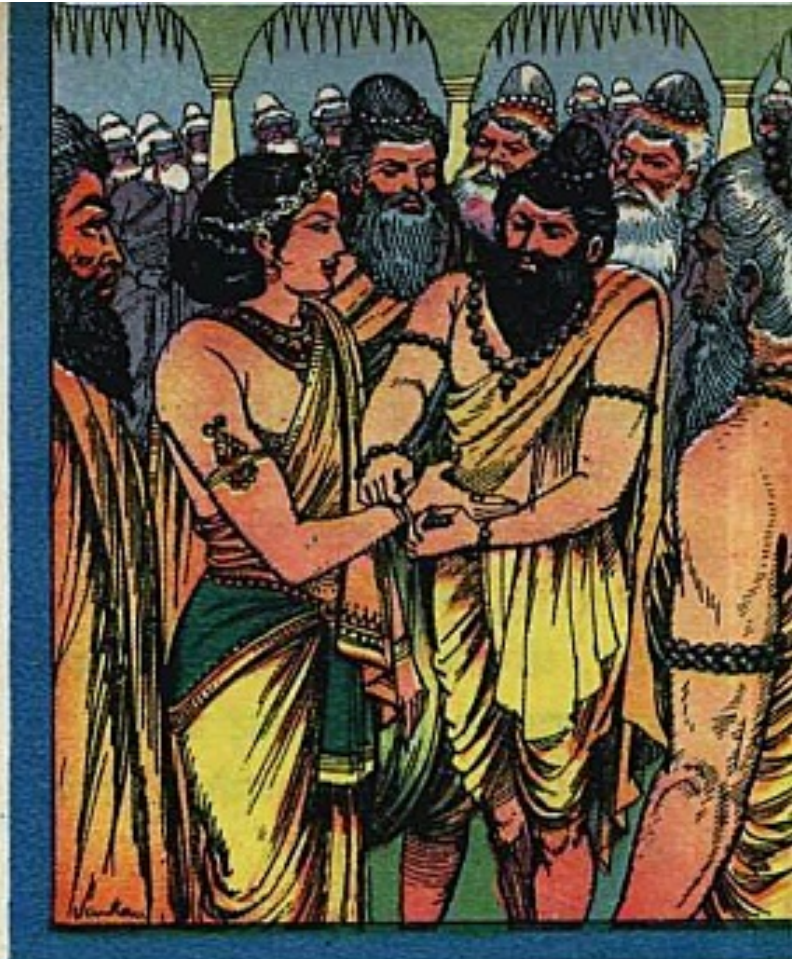
सहदेव की इन बातों पर सभी सभासदों ने अपनी स्वीकृति दी। युधिष्ठिर ने तुरंत कृष्ण के चरण धोकर, उनको रेशमी वस्त्र तथा आभूषण दिये। शेष सभी राजाओं ने कृष्ण को प्रणाम किया।

पर दमघोष के पुत्र शिशुपाल को यह बात बिलकुल पसंद न आयी। वह झट उठ खड़ा हुआ और हाथ उठाकर मुंह में जो आया, बकने लगा—"काल का प्रभाव न हो तो उस छोटे युवक का सुझाव देना और आप सब का सर चालन करना ये सब क्या है? इस सभा में ऐसे महान तपस्वी हैं, उनकी उपेक्षा कर इस ग्वाले

की प्रथम पूजा करना कहाँ तक उचित है? ययाति द्वारा शपित यादव हीन जो हैं!"

इस पर कृष्ण विचलित नहीं हुए। लेकिन कुछ लोग वे बातें सुनकर अपने कान बंद करते वहाँ से उठकर चले गये। कुछ लोग शिशुपाल के साथ युद्ध करने के लिए उस पर टूट पड़े। कृष्ण ने उन सब को रोका, और अपने सुदर्शन चक्र का प्रयोग कर शिशुपाल का सर काट डाला। इस पर सभा में हलचल मच गयी। शिशुपाल के दल के लोग भाग गये।

युधिष्ठिर ने सबको दान दिये, अपभृत स्नान करके यज्ञ की समाप्ति की।

राजसूय-यज्ञ को देखने आये हुए राजाओं के चले जाने के बाद भी युधिष्ठिर के अनुरोध पर कृष्ण कुछ समय तक इंद्रप्रस्थ में रह गये।

पांडवों के बढ़ते यश और वैभव को देख दुर्योधन ईर्ष्या से जल उठा। क्योंकि उसने युधिष्ठिर के वैभव को अपनी आँखों से देखा था। राजसूय-यज्ञ वैभव के साथ संपन्न हुआ था। मय ने युधिष्ठिर के लिए एक अद्‌भुत सभा का निर्माण किया था। उस सभा में अनेक राजाओं ने पांडवों की सेवा की। उसमें कृष्ण की पत्नियों ने विहार किया है। उसी सभा में दुर्योधन का पराभव हुआ है। उसमें इस बात का पता न चला कि कहाँ पर पानी है और कहाँ ज़मीन है। दुर्योधन जहाँ पानी न था, वहाँ कपड़े ऊपर खींचे चलने लगा था, जहाँ पानी था, वहाँ भ्रम में पड़कर कि पानी नहीं है, कपड़े भिगो लिया। उसे देख कृष्ण ने हँस दिया, सभी नारियों ने हँसा। युधिष्ठिर ने सबको हँसते देख मना किया, पर किसी ने इसकी परवाह न की। खूब अपमानित होकर दुर्योधन हस्तिनापुर लौट गया।

अरण्य पुराण

[२१]
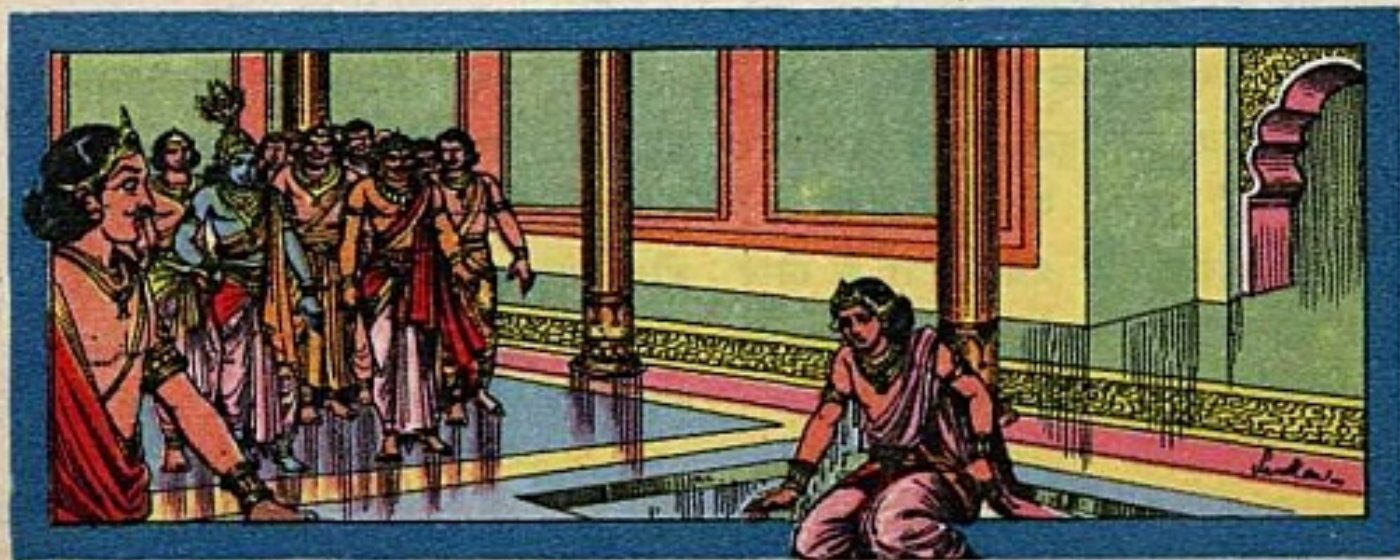
लाल शुनकों के साथ युद्ध और अकेला की मृत्यु हुए एक साल बीत गया था। मौवली अब १७ साल की उम्र पूरा करने जा रहा है। लेकिन वह उम्र से ज्यादा बलवान दीखता था। इसका कारण उसका शरीरिक गठन और अच्छा खाना रहा है। बड़ी तेजी से उछल-कूद भरनेवाले हिरण को पकड़कर वह नीचे गिरा सकता है। जंगल के और प्राणी उसके आते देख रास्ते से हट जाते हैं। उससे सब भय खाते हैं।

जाड़े का मौसम खतम हो गया और वसंतकाल का आगमन होनेवाला है। वाइन गंगा के तट पर एक ऊँचे टीले पर बाघीर और मौवली लेटे हुए हैं।

"पुराना साल समाप्त होने को है और नया वर्ष शुरू होनेवाला है। नये गीत गाने का वक़्त आ गया है। जंगल में नयी ज़िंदगी शुरू हो रही है।" यह कहते खुली हवा में चित लेटे बाघीर हवा में पैर चलाने लगा।

"यह तुम क्या करते हो! तुम और मैं–हम दोनों इस जंगल के राजा हैं। यह शर्म की बात न होगी?" मौवली ने बाघीर को डांट बतायी।

बाघीर ठीक से बैठते बोला–"मैंने कहा था कि नये गीतों का समय आया है!"

"हाँ, हाँ! तुम सब लोग मुझे अकेले छोड़कर चले जाओगे! पिछले साल क्या हुआ? खेतों से ईख लाने को हाथी से बताया तो वह दो दिन बाद लौटा। इस बीच उसने किया ही क्या था? पेड़ों के बीच दौड़ते–चाँदनी में उछल-कूद करता रहा। मैं सब-कुछ देख रहा था।" मौवली ने कहा।

"नये गीतों के समय का मतलब यही है, भाई!" बाघीर बोला ।

वसंतऋतु के आगमन से जंगल में एक नयी शोभा आयी । जंगल के निवासी बड़े उल्लास का अनुभव करने लगे । उनकी कंठ-ध्वनियाँ ही बदल गयीं । साधारणतः इस ऋतु में मौवली भी बड़े उल्लास के साथ रहते जंगल में कई मील दौड़ा करता था ।

लेकिन इस साल उसमें ज़रा भी उत्साह नहीं है । खाना पचता न था । मन में कोई खीझ पैदा होती ! मौवली की समझ में नहीं आया कि उसने बाघीर से खीझकर बात क्यों की? उसके शरीर में बीमारी के लक्षण बिलकुल नहीं हैं । बाक़ी अरण्यवासी भी ऐसा अनुभव कर रहे हैं, मानों उनका दिमाग खराब होता जा रहा हो!

वसंतऋतु में जवान भेड़िया आपस में लड़ते हैं, भीड़ से बचकर एकांत में युद्ध करते हैं, यह बात मौवली जानता है । जानते हुए भी उसने दो लड़नेवाले भेड़ियों के बीच जाकर उनको रोकने का प्रयत्न किया । दोनों एक साथ मौवली को अलग खदेड़कर फिर लड़ने लगे ।

मौवली को तुरंत क्रोध आया । उसने क्रोध से दाँत पीसते झट म्यान से तलवार निकाली । उसका विचार दोनों भेडियों को मार डालने का था । लेकिन उसे दुर्बलता का अनुभव हुआ । तलवार फिर म्यान में चली गयी ।

"मैं ने शायद कोई जहर खा लिया है । आज तक मैं यह नहीं जानता था कि कोई भेडिया मुझे ढकेल सकता है । ये दोनों जवान मुझे बड़ी आसानी से ढकेल पाये! मुझ में ताक़त नहीं है । मैं जल्द मर जाऊँगा ।" मौवली ने सोचा । वह दुख में भर गया ।

उस शाम को मौवली ने शिकार खेला, पर उसे खाना पसंद नहीं आया। रात को चाँदनी छिटक रही थी। सारे जंगल में नये गीत और झगड़ों की आवाज़ सुनायी दे रही थी। ऐसी रातों में मौवली को दौड़ने की आदत थी। वह ज़ोर से गाते हुए, जंगल के बीच से उत्तरी दिशा की ओर दौड़ पड़ा—उछलते कूदते हुए पाहाड़ की ओर चला।

वह हरी घास के बीच बैठ गया। फिर उसके दिल में विषाद छा गया। उसने सोचा कि ज़रूर उसने ज़हर खा लिया होगा। उन दो भेढियों के लड़ते समय उसे डर लगा था। अगर फाओ या अकेला होते तो क्या वे डर जाते?

अब उसे भय और मौत दोनों सताने लगीं। क्या इस दल-दल के बीच उसकी लाश तिर जायगी? सोचा कि जंगल के बीच के टीले पर जाकर मरना अच्छा होगा, जिससे उसे अकेला की तरह गीधों के नोचते खाने से उसकी लाश की रक्षा बाघीर करेगा!

उसकी आँख से एक आँसू ढुलक पड़ा। उस विषाद में उसे कोई संतोष प्राप्त हुआ। उसे मरते समय अकेला की कही बातें याद आयीं। अकेला ने मौवली को मानवों के बीच जाने को कहा था।
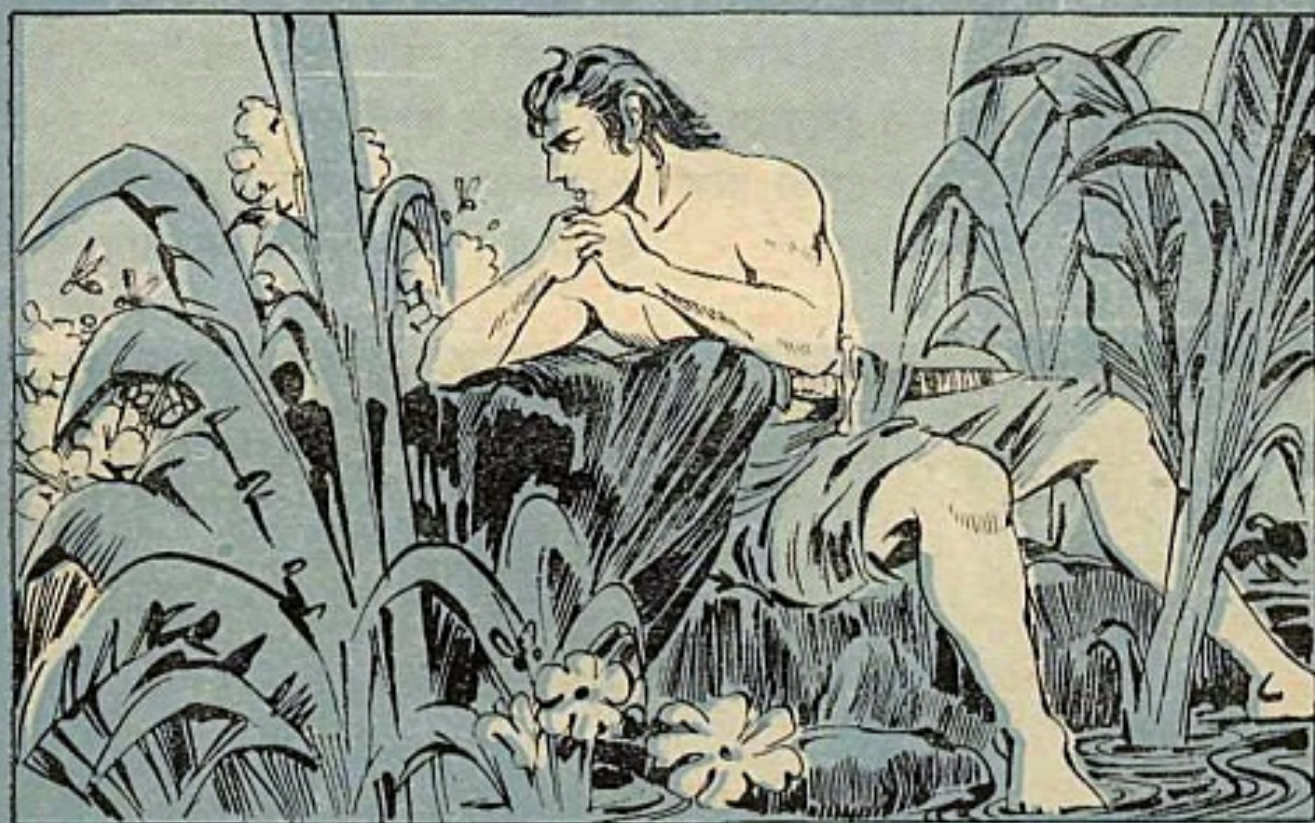
"मौत के मुँह में जाते पागल हो अकेला ने कुछ कह दिया। मैं ही अरण्य हूँ!" मौवली चिल्ला पड़ा!

दूब के बीच में से एक जंगली भैंस चिल्ला उठी—"मनुष्य!"

उसके साथ रहनेवाला भैंसा सर उठाकर बोला—"छी! मनुष्य नहीं! सियोनी भीड़ के साथ रहनेवाला भेढिया है जिसके बाल नहीं है!" ये बातें मौवली ने सुनीं। उस भैंसे का नाम मैंसा है। उसे मौवली जानता है।

मैंसा की बातें सुनने पर मौवली को क्रोध आया। उसने दूब के बीच में से जाकर अपनी काटर से मैंसा के शरीर पर भोंक दिया। मैंसा पीड़ा से छटपटाने लगा। तब मौवली उठाकर हँसते बोला—"सियोनी भीड़ में रहनेवाले बे केशवाला मैं भेड़िया हूँ। एक बार मैंने तुमको हाँक दिया था!"

"तुम! भेड़िये हो! सारा जंगल जानता है कि तुम पालतू जानवरों को हाँकने वाले हो! तुम अगर सच्चे शिकारी हो, तो क्या साँप की तरह रेंगते आकर एक औरत के सामने मेरा अपमान करते?" मैंसा ने कहा।

"मुझे यह प्रदेश नया लगता है। मैंसा, क्या इधर कहीं मानवों की भीड़ है?" मौवली ने पूछा।

"उत्तर की ओर जाओ! इस दल दल को पार करने पर एक गाँव मिलेगा!" मैंसा ने जवाब दिया।

मौवली दल-दल पारकर एक विशाल मैदान में पहुँचा। उसे दूर पर दिये की रोशनी दिखायी पड़ी! लाल फूल! उसने मनुष्यों के बारे में बहुत समय पहले विचार किया था। लेकिन अब वह "लाल फूल" उसे आकृष्ट करने लगा!

"मनुष्यों की भीड़ कैसे बदल गयी होगी, देखना है।" यह सोचते वह आगे बढ़ा।

८५. सिलोन का बौद्ध मंदिर

रुवन्वेली का बौद्धमंदिर अनूराधपुर में २००० साल पहले एक राजा द्वारा निर्मित हुआ है। इसके निर्माण में करोड़ों ईंटों का उपयोग किया गया है। कहा जाता है कि इसकी नींव में सोने और चाँदी की ईंटें रखी गयी हैं। इसकी ऊँचाई १८० फुट है। उत्सव के समय यात्री इस पर चढ़ते हैं।

Photo by Vidya Chandra Patwa
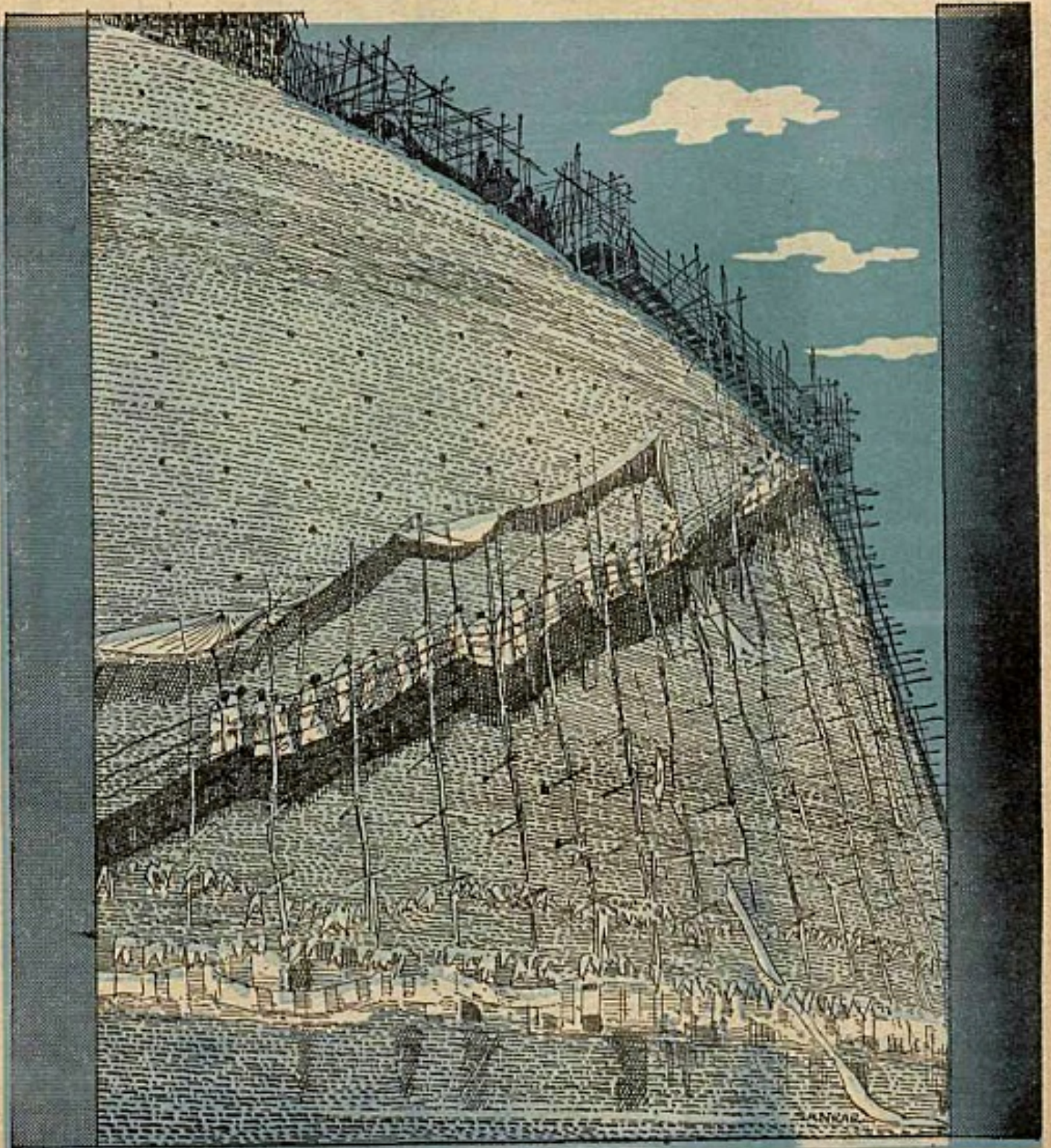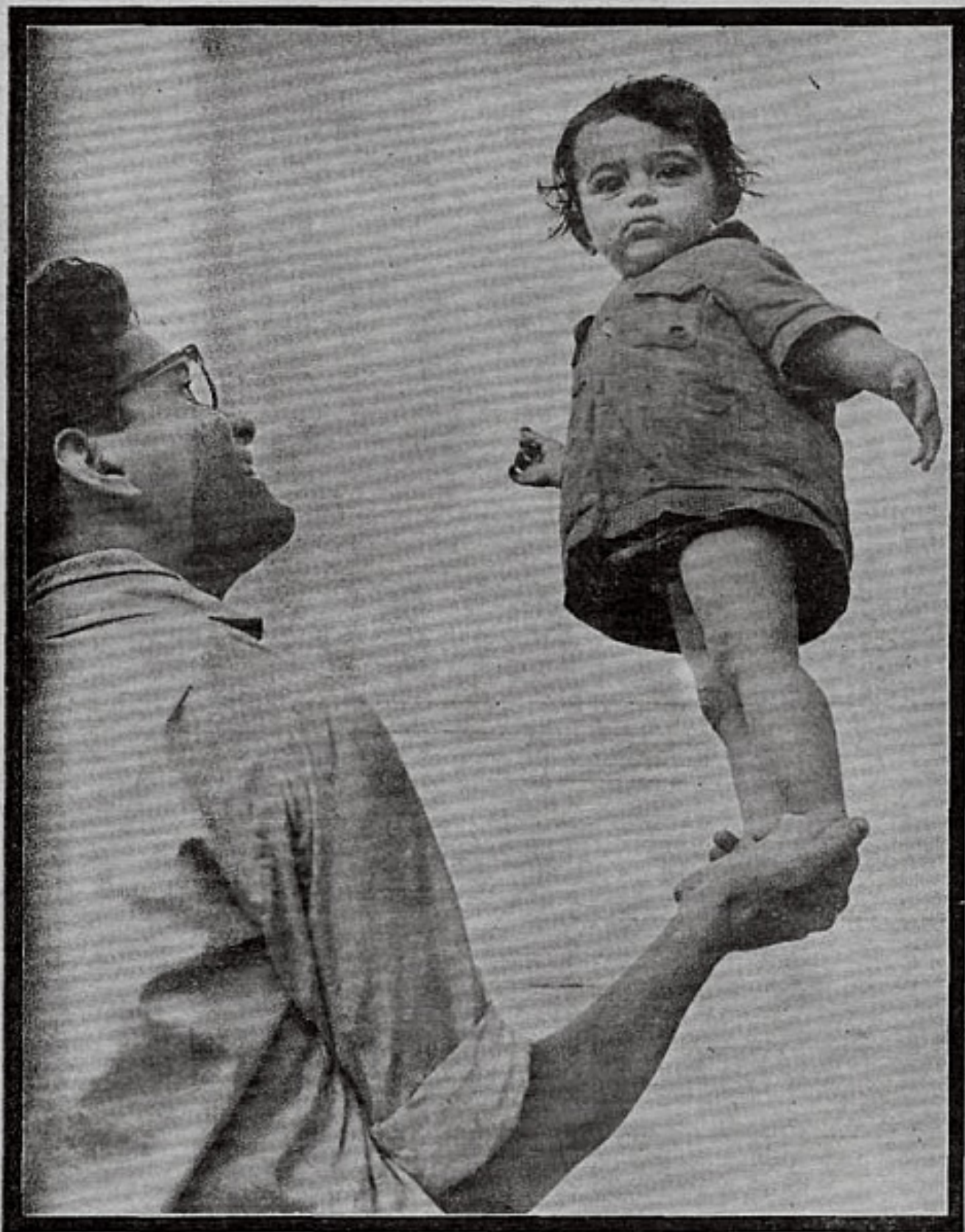
पुरस्कृत परिचयोक्ति

'खिलौना नहीं, भारत माँ का लाल हूँ।'

प्रेषक: सुधीर धर्मावत - भरतपुर

Photo by B. Bhansali

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

'तमाशा नहीं, गरीब पेट-पालक हूँ।'

प्रेषक:
सुधीर धर्मावत - भरतपुर

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मार्च १९६९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ जनवरी १९६९ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

जनवरी – प्रतियोगिता – फल

जनवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: 'खिलौना नहीं, भारत माँ का लाल हूँ।'
दूसरा फ़ोटो: 'तमाशा नहीं, गरीब पेट-पालक हूँ!'

प्रेषक: **सुधीर धर्मावत,**
C/o श्री के. पी. धर्मावत ; मैनेजर, स्टेट बैंक आफ़ बीकानेर एण्ड जयपुर, भरतपुर (राजस्थान)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

फॉस्फ़ोमिन से बल और उत्साह बढ़ता है, भूख बढ़ती है, अधिक काम करने की शक्ति प्राप्त होती है, शरीर की रोगप्रतिरोध -क्षमता बढ़ती है

TTT
SQUIBB
Phosfomin
VITAMINS ELIXIR

जी हाँ,
सारे परिवार के स्वास्थ्य के लिए... फॉस्फ़ोमिन !

विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स तथा विविध
ग्लिसियरोफ़ॉस्फेट्सयुक्त फलों के ज़ायकेवाला, हरे रंग का विटामिन टॉनिक—फॉस्फ़ोमिन

SQUIBB® TTT®

®-ई. आर. स्क्विब एण्ड सन्स इन्कार्पोरेटेड का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है। करमचन्द प्रेमचन्द प्राइवेट लि. को इसे उपयोग करने का लाइसेन्स प्राप्त है।

SARABHAI CHEMICALS

Shilpi SC 50 A/67 Hin